निर्मला योग

द्विमासिक वर्ष २ अंक ७ मई-जुन-1983

ॐ त्वमेव साक्षात्, श्री कल्की साक्षात्, श्री सहस्रार स्वामिनी, मोक्ष प्रदायिनी, माता जी, श्री निर्मला देवी नमो नमः ।।

!! ॐ माँ !!

मिथ्या

५ मई, १९७५ सहस्त्रार दिवस पर परमपूज्य माताजी द्वारा दिया गया सन्देश

प्रिय दामले,

अनेकानेक आशीर्वाद !

आपका पत्र मिला। सहस्त्रार पर खिचाव आना बहुत अच्छा लक्षण है। क्योंकि सहस्त्रार के माध्यम से मनुष्य का हृदय अनन्त किरणों से भरा जाता है और अन्त:स्थिति के लिए नये दरवाज़े खुलते हैं। परन्तु इस अन्त:स्थिति के लिए सहस्त्रार पर खिचाव आना ज़रूरी है। हृदय का खिचाव हम जानते हैं, जो मूक (Silent) है और एकतर्फा है, मतलब भावात्मक होता है, परन्तु सहस्त्रार का खिचाव सामूहिक होता है। वहाँ मनुष्य की स्थिति, धर्म और चेतना एक होकर चैतन्य को ही (प्रभुप्रेम को ही) याद करने लगती है तब ऐसी स्थिति (सहस्त्रार पर खिचाव आना) आती है। ये सब अपने आप घटित होता है। यह सब आपकी कुण्डलिनी का करिश्मा होता है। किन्तु आपका व्यक्तित्व ऐसा हो कि कुण्डलिनी शक्तिशाली बन सके। यह सम्पदा पिछले अनेक जन्मों से कमायी है। इसलिए यह जन्म उच्च है कि ऐसे हीरे मेरे काम के लिए मिले।

मेरा शरीर यहाँ होते हुए भी मैं सभी जगह हूँ, यह अगर जानोगे तो ये भी समझना चाहिए कि शरीर भी एक मिथ्या दर्शन ही है। यह स्थिति आना मुश्किल है। परन्तु अगर धीरे-धीरे मिथ्या को आप जानने लगोगे तब सत्य अपने आप ही मन में बसेगा (आत्मसात होगा)। और महा आनन्द की लहरें पूरे व्यक्तित्व को घेर लेंगी। इस पत्र में मैं मिथ्या क्या है वह बताने जा रही हूँ। वह सब को बताइए और उस पर सोच-विचार कीजिए।

इस संसार में जन्म लिया और मिथ्या शुरू। आपका नाम क्या है? गाँव क्या है? देश क्या है? राशि क्या है? भविष्य क्या है? इस तरह की कितनी बातें आपके साथ चिपकती हैं या चिपकायी जाती हैं। एक बार ब्रह्मरन्ध्र बन्द होते ही अनेक प्रकार के मिथ्या विचार आपके मन के (आत्म के) भाव हो जाते हैं। जैसे कि, ये चीज़ें मेरी, ये मेरा, वह मेरा वगैरा झूठे विचार मन में बसते हैं। उसी प्रकार मेरा शरीर निरोगी और सुन्दर रहना चाहिए ऐसे बन्धनकारक मिथ्यावादी विचार जो कि मनुष्य ने स्वयं बनाये हुए हैं हमारी बुद्धि में बस जाते हैं। उसके बाद ये मेरा भाई, ये मेरा बाप, ये मेरी माँ इस तरह के मिथ्या रिश्ते सिर पर बैठते हैं। फिर धीरे-धीरे अहङ्कार जम गया कि मैं अमीर, मैं गरीब, मैं अनाथ या मैं बड़े खानदान का इस तरह का पागलपन सिर पर सवार हो जाता है। बहुत से अधिकारियों को और राजनीतिज्ञों को (Politicians) घमण्ड की, मतलब गर्वेपन की, बाधा होती है। उसके बाद क्रोध, द्वेष, संयम, विरह, दु:ख, प्यार के पीछे छिपा हुआ मोह, लालसा के पर्दे में बसी हुई संस्कृति, इन सभी मिथ्या आचरणों को मनुष्य प्यार से गले लगाता है।

(शेष कवर पृष्ठ ४ पर)

सम्पादकीय

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ।।

(दुर्गासप्तशती, पञ्चमोध्यायः, श्लोक ८१)

पूर्वकाल में अपने अभीष्ट की प्राप्ति होने से देवताओं ने जिनकी स्तुति की तथा देवराज इन्द्र ने बहुत दिनों तक जिनका सेवन किया, वह कल्याण की साधनभूता ईश्वरी हमारा कल्याण और मङ्गल करे तथा सारी आपत्तियों का नाश कर डाले ।

हम, साक्षात्, परमपरमेश्वरी आदिशक्ति माताजी से प्रार्थना करते हैं कि सम्पूर्ण विश्व शीघ्र आपकी शरण में आकर अपना जीवन सार्थक करे ।

निर्मला योग

४३, बंगलो रोड, दिल्ली-११०००७

संस्थापक : परम पूज्य माता जी श्री निर्मला देवी

सम्पादक मण्डल : डॉ शिव कुमार माथुर
श्री आनन्द स्वरूप मिश्र
: श्री आर. डी. कुलकर्णी

प्रतिनिधि कनाडा : लोरी टोडरिक
४५१८ वुडग्रीन ड्राइव
वैस्ट वैन्कूवर,
बी.सी. वी. ७ एस. २ वी १

यू.एस.ए. श्रीमती क्रिस्टाइन पेंट्रूनीया
२२५, अदम्स स्ट्रीट, १/ई
ब्रुकलिन, न्यूयार्क-११२०१

भारत श्री एम० बी० रत्नान्तवर
१३, मेरवान मेन्सन
गंजवाला लेन, बोरीवली
(पश्चिमी) बम्बई-४०००६२
श्री राजाराम शंकर रजवाड़े
८४०, सदाशिव पेठ, पुणे-४११०३०

यू.के. श्री गेविन ब्राउन
ब्राउन्स जियोलॉजिकल इन्फ़र्मेशन
सर्विसेज लि.,
१६० नार्थ गावर स्ट्रीट
लन्दन एन डब्लू. १ २ एन.डी.

इस अंक में . . . . **पृष्ठ**

१. सम्पादकीय	...	१
२. प्रतिनिधि	...	२
३. निर्मला	...	३
४. लक्ष्मी तत्त्व	...	१३
५. मिथ्या	...	द्वितीय कवर

'निर्मला'

१८ जनवरी १९८० को राहुरी में मराठी प्रवचन का हिन्दी रूपान्तर जिसमें परमपूज्य श्री माताजी ने स्वतः पूर्ण मन्त्र स्वनाम 'निर्मला' (निः+म+ला) में निहित गूढ़ भाव की विश्लेषणपूर्ण विशद व्याख्या की है।

यह हर्ष की बात है कि सब सहजयोगी एक साथ एकत्रित हुए हैं। जब हम इस भाँति एकत्रित होते हैं तब हम परस्पर हित की अनेक बातों पर विचारों का आदान-प्रदान कर सकते हैं और उन विषयों पर अनेक सूक्ष्म बातें एक दूसरे को बता सकते हैं। दो-एक दिन पहले मैंने अपने को स्वच्छ, दोष-मुक्त करने की विधि बताई थी। स्वयं आपकी माँ का नाम ही निर्मला है और इसमें अनेक शक्तियाँ हैं।

इस नाम मे पहला शब्द 'निः' है जिसका अर्थ है 'नहीं'। कोई वस्तु जिसका वास्तव में अस्तित्व नहीं है किन्तु जिसका अस्तित्व प्रतीत होता है, उसे महामाया (भ्रम) कहते हैं। सम्पूर्ण विश्व इसी प्रकार है। यह दिखता है किन्तु वास्तव में नहीं है। यदि हम इसमें तल्लीन हो जाते हैं तो प्रतीत होता है यही सब कुछ है। तब हमें लगता है हमारी आर्थिक अवस्था अच्छी नहीं है, सामाजिक व पारिवारिक स्थितियाँ असन्तोषजनक हैं। हमारे चारों ओर सम्पूर्ण जो कुछ भी है सब खराब है। हम किसी चीज़ से सन्तुष्ट नहीं हैं।

समुद्र सतह पर जल अत्यन्त गदला होता है। उसके ऊपर अनेक वस्तुएं तैरती रहती हैं। किन्तु यदि हम उसकी गहराई में जायें तो देखेंगे कि उसके भीतर कितना सौंदर्य, कितनी धन सम्पदा और कितनी शक्ति है। तब हम भूल जायेंगे कि सतह का जल मैला है।

कहने का अभिप्राय है कि हम चारों ओर जो देखते हैं वह सब माया (भ्रम) है। सर्वप्रथम आप को स्मरण रखना चाहिये कि यह सब जो दिखता है यह कुछ नहीं है। यदि आपको 'निः' भावना अपने अन्दर प्रतिष्ठित करना है तो जब भी आपके मन में विचार आये तो कहिये यह कुछ नहीं है यह सब भ्रम है, मिथ्या है। दूसरा विचार आये कहिये यह कुछ नहीं है। आपको बारम्बार यह भाव लाना

है। तब आप 'नि:' शब्द का अर्थ समझ पायेंगे।

आपको जो कुछ माया-रूप दिखता है यह सम्पूर्णत: भ्रम मात्र नहीं है, इस दृश्यमान के परे भी कुछ है। किन्तु अपने जन्मों के इतने बहुमूल्य वर्ष हमने वृथा गंवा दिये हैं कि हम वे वस्तुएँ जिनका वास्तव में अस्तित्व नहीं है उनको महत्त्व देते हैं और इस भांति हमने पापों के ढेर इकट्ठे कर लिये हैं। इन सब वस्तुओं में हमने आनन्द-लाभ करने का प्रयास किया है, किन्तु वास्तव में इनमें से हमें कुछ भी आनन्द प्राप्त नहीं हुआ। तत्व रूप से ये सब कुछ नहीं है।

अत: दृष्टिकोण यह होना चाहिये कि यह सब "कुछ नहीं" है। केवल ब्रह्म ही सत्य है, अन्य सब मिथ्या है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आपको यह दृष्टिकोण अपनाना है। तब आप सहज योग को समझेंगे। साक्षात्कार के पश्चात् अनेक सहज योगियों का यह होता है कि वे सोचते हैं कि हमें सिद्धि (साक्षात्कार) प्राप्त है, हमें पूज्य माताजी का आशीर्वाद प्राप्त है तो हम समृद्ध क्यों नहीं है। उन के विचार में परमात्मा का अर्थ है समृद्धि। यदि आप विचार करें कि क्या कारण है कि साक्षात्कार के पश्चात् भी आपका 'स्वभाव' नहीं बदला, तब आप देखेंगे कि आपकी आत्मा का स्वरूप नहीं बदला। देखिये, 'स्व' अर्थात् आत्मा और 'भाव' अर्थात् स्वरूप के योग से बना 'स्वभाव' शब्द कितना सुन्दर है। बताइये, क्या आपने अपनी आत्मा का स्वरूप प्राप्त कर लिया है। यदि आप 'आत्मा' में स्थित हो गये तो आप देखेंगे कि भीतर इतना सौंदर्य है कि आपको बाह्य सब कुछ नाटक सा प्रतीत होगा। जब तक आपको यह साक्षी स्थिति जागृत नहीं होती, आपने 'नि:' शब्द का अनुसरण नहीं किया, उसके अनुसार आचरण नहीं किया। यदि आप जानते हैं कि 'नि:' आपके भीतर प्रतिष्ठित नहीं हुआ है, फिर भी आप भावुक, अहङ्कारी, हठी अथवा विनम्र व निराश होते रहते हैं तो इन पराकाष्ठाओं (असीम अवस्थाओं) में स्थिति का कारण 'नि:' से सम्बन्धित है। आप न इधर न उधर, न इस स्थिति में हैं और न उस स्थिति में, अर्थात् डावांडोल स्थिति में हैं। 'नि:' स्थिति ध्यानयोग में सर्वश्रेष्ठ रूप में प्राप्त की जा सकती है। अपने जीवन में 'नि:' विचार का अनुसरण करने से आप 'निर्विचार' स्थिति प्राप्त कर लेंगे।

सर्वप्रथम आपको निर्विचार होना चाहिये। जब आपके मन में कोई विचार आता है, चाहे वह अच्छा हो अथवा बुरा, तब विचारों का तांता-सा लग जाता है। एक के बाद दूसरा विचार आता रहता है। कुछ लोग कहते हैं कि बुरे विचार का अच्छे विचार से प्रतिकार करना चाहिये, अर्थात् एक दिशा से आने वाली गाड़ी को जब विपरीत दिशा से आने वाली गाड़ी से धकेला जाये तो दोनों एक मध्य स्थान पर रुक जायेंगी। कहीं तक यह ठीक है किन्तु कभी-कभी यह हानिकारक भी हो सकता है। एक कुविचार जब एक सुविचार द्वारा दबाया जाता है तो यह भीतर ही भीतर दबा रहता है। किन्तु यह एकाएक उभर सकता है। अनेक व्यक्तियों के साथ ऐसा ही होता है। वे अपने सामान्य विचारों को दबा रखते हैं और अपने से कहते हैं हमें परोपकारी होना चाहिये, अपने आचरण अच्छे रखने चाहियें, इत्यादि। कभी-कभी ऐसे लोग बड़े उपद्रव-ग्रस्त हो सकते हैं। अचानक एकदम यह क्रोध के वशीभूत हो जाते हैं और लोग चकित हो जाते हैं कि ये सज्जन व्यक्ति कैसे इतने क्रोध-ग्रस्त हो गये। वे अपनी निजी मानसिक शान्ति भी खो बैठते हैं। उनका सम्पूर्ण आन्तरिक सौंदर्य समाप्त हो जाता है। अत: वाञ्छनीय यही है कि हम सदैव निर्विचार रहें। अपने मस्तिक से छोटे विचारों पर प्रतिबन्ध लगा दें। तब आप स्वत: ही मध्य में रहेंगे।

आपको समस्त प्रयत्न करने चाहियें। अब आप

पूछेंगे, 'माँ, बिना विचार किये हम काम कैसे कर सकते हैं?'' अब आपके विचार क्या हैं? वह वास्तव में खोखले हैं। निर्विचार अवस्था में आप परमात्मा की शक्ति के साथ एकरूप हो जाते हैं अर्थात् बूंद (अर्थात् आप स्वयं) समुद्र (अर्थात् परमात्मा) में आकर मिल जाती है। तब परमात्मा की शक्ति भी आपके भीतर आ जाती है। क्या आप की अंगुली सोचती है? क्या यह फिर भी चल नहीं रही? अपने विचारों को परमात्मा को समर्पित कर दें और अपने विषय में सोचने का भार उस पर छोड़ दें। किन्तु यह कठिन-सा है क्योंकि आप निर्विचार स्थिति में नहीं हैं।

अनेक लोग कहते हैं हमने सब परमात्मा को समर्पण कर दिया है। किन्तु यह केवल मौखिक होता है, वास्तव में नहीं। समर्पण मौखिक क्रिया नहीं है। निर्विचारिता प्राप्त करने के लिये, जिसका अर्थ है आपका विचार करना बन्द कर देना, आपको समर्पण करना पड़ता है। जब आपकी विचार क्रिया बन्द हो जाती है तब आप मध्य में आ जाते हैं। मध्य में आते ही तुरन्त आप निर्विचार चेतना में पहुँच जाते हैं अर्थात् आप परमात्मा की शक्ति के साथ एकरूप हो जाते हैं और जब ऐसा होता है तब वह (परमात्मा) आपकी देख-रेख करता है। वह आपकी छोटी-छोटी बातों के विषय में सोचता है। यह आश्चर्यजनक है। किन्तु आप करके तो देखें और आप देखेंगे कि आपका पहला रास्ता गलत था। अतः एक बार जब आप निर्विचारिता का स्वाद लेते हैं तो आप देखते हैं कि आपको समस्त प्रेरणायें समस्त शक्तियाँ और अन्य सर्वस्व प्राप्त होने लगता है। निर्विचारिता में आपके मन में जो विचार आता है वह एक अन्तः स्फुरण (inspiration) होता है। आप चकित होंगे। प्रत्येक वस्तु आपके सामने ऐसे आयेगी मानो थाली में परोस कर आपके सम्मुख प्रस्तुत कर दी गई। आप वक्तृता देने खड़े होते हैं, केवल निर्विचारिता में प्रवेश कीजिये और श्रीगणेश कर दीजिये। यद्यपि आपने पहले कभी भाषण नहीं दिया, भाषण का कला का आपको कुछ ज्ञान नहीं अथवा प्रस्तुत विषय का आपको कुछ विशेष ज्ञान नहीं किन्तु चमत्कार! आप इतना कमाल का बोलेंगे कि लोग स्तम्भित हो जायेंगे कि यह ज्ञान भण्डार आप में कहाँ से उमड़ पड़ा। किन्तु जहाँ एक बार आप निर्विचारिता में गहरे उतरे, सब कुछ वहाँ से (निर्विचरिता से) आता है, न कि आपके मस्तिष्क से।

अब मैं आपको अपना रहस्य बताती हूँ। आप प्रार्थना कीजिये, ''माँ, मेरे लिये कृपया ऐसा कर दीजिये''। आप आश्चर्य करेंगे। मैं आपकी विनती पर विचार नहीं करती। केवल उसे अपनी निर्विचारिता को समर्पित कर देती हूँ। सम्पूर्ण संयन्त्र वहाँ क्रियाशील होता है। उसे (विचार को) उस संयन्त्र (निर्विचारिता) में डालिये और माल तैयार होकर आपके सम्मुख आ जाता है। आप उस संयन्त्र-यों कहें नीरव अथवा शान्त संयन्त्र-को काम तो करने दीजिये। अपनी सारी समस्याएं उनको सौंपिये। किन्तु बुद्धि-जीवियों के लिये यह अत्यन्त कठिन है क्योंकि उनको प्रत्येक बात के बारे में सोचने की आदत होती है।

किसी विषय को समझने की कोशिश करते समय आप निर्विचारिता में प्रवेश करने की क्षमता प्राप्त कीजिये। आप देखेंगे सब कुछ स्वतः ही स्पष्ट हो जाता है। आप जो अनुसन्धान करते हैं वह भी निर्विचार अवस्था में करना चाहिये। निर्विचार अवस्था में कार्य-रत रहने का अभ्यास कीजिये। इस भांति आप अति उत्कृष्ट रीति से अपना अनुसंधान कार्य कर सकते हैं। मैं अनेक विषयों पर बोलती हूँ। अपने जीवन में मैंने कभी विज्ञान का अध्ययन नहीं किया और उस विषय में कुछ नहीं जानती। फिर यह सब ज्ञान कहाँ से आता है? निर्विचारिता से। मैं बोलती जाती हूँ और जो कुछ होता है उसे देखती रहती हूँ। मेरे वाणीरूपी

कम्प्यूटर में मानो यह सब कुछ पहले से तयार करा कराया रखा था। यदि आप निर्विचार अवस्था में नहीं हैं तो आप उस कमप्यूटर(अर्थात् निर्विचारिता) का उपयोग नहीं कर रहे हैं और अपने मस्तिष्क को उसके ऊपर प्रतिष्ठित करते हैं (अर्थात् आपका निर्विचारितारूपी कम्प्यूटर निष्क्रिय रहता है और आपके सब कार्य मानव मस्तिष्क शक्ति, जो सीमित है, उसके बल पर होते हैं) निर्विचारिता एक प्राचीन कम्प्यूटर है और इसकी शक्ति से विपुल परिमाण में सही कार्य किया गया है। यदि आप अपने मस्तिष्क का प्रयोग करते हैं और इस कम्प्यूटर का आश्रय नहीं लेते तो आप निश्चित् रूप से गलतियाँ करेंगे।

निर्विचार अवस्था में जो कुछ भी घटित होता है वह प्रबुद्ध प्रकाशमान होता है। हिन्दी, मराठी तथा संस्कृत भाषाओं में किसी शब्द से पहले 'प्र' युक्त करने से उसका अर्थ होता है प्रकाशित, प्रकाशमान। प्रकाश कभी बोलता नहीं। यदि आप कमरे की बत्ती जला दें, तो वह बत्ती(दीप) बोलेगी नहीं अथवा कोई विचार आपको नहीं देगी। वह केवल सब कुछ दृष्यमान (प्रकट) कर देगी। यही बात निर्विचारिता रूप प्रकाश के बारे में है। निर्विचार, निरहङ्कार (अर्थात् अहङ्कार रहित) इत्यादि सब शब्दों के पहले 'निः' जुड़ा है। आप इसे (अर्थात् 'निः' को) अपने भीतर स्थापित कीजिये और तब आप निर्विकल्प अवस्था में आ जायेंगे। पहले निर्विचार, तत्पश्चात् निर्विकल्प। तब आपकी समस्त सन्देह व शङ्कायें समाप्त हो जाती हैं और आपको प्रतीत होता है कि कोई शक्ति है जो काम करती है। यह शक्ति अत्यन्त द्रुत गति से काम करती है और अत्यन्त सूक्ष्म है। आप आश्चर्य करेंगे यह सब कैसे घटित होता है।

यही बात समय के विषय में है। मैं कभी घड़ी की तरफ़ नहीं देखती। कभी-कभी यह रुक जाती है, कभी गलत समय बताती है। किन्तु मेरी असली घड़ी निर्विचारिता में है। यह हमेशा स्थिर (शान्त) रहती है। यदि कोई कार्य करना हो तो वह उचित् समय पर हो जाता है। फिर मन में कुछ पश्चात्ताप नहीं होता कि यह समय पर हुआ अथवा देरी से। जब भी हो, मुझे कोई चिन्ता नहीं।

कल मेरी गाड़ी(कार) खराब हो गई। किन्तु मैं आनन्दमग्न थी क्योंकि मैं तारागणों को देखना चाहती थी। वह सौंदर्य लन्दन में उपलब्ध नहीं होता। अत: मैं वह देखना चाहती थी। इसका सौंदर्य सम्पूर्ण आकाश में व्याप्त था। आकाश की अभिलाषा थी माँ उसकी इस छटा को देखें। कभी-कभी मुझे उस ओर भी देखना आवश्यक होता है। मैं उसका आनन्द लाभ कर रही थी। संक्षेप में, आपको किसी वस्तु का दास नहीं होना चाहिये।

यदि आप निर्विचार अवस्था में हैं तो परमात्मा आपको सर्वत्र ले जाते हैं मानो अपने हाथों पर उठा कर, ऐसी सरलतापूर्वक। वह सब प्रबन्ध कर देते हैं। वह सब कुछ जानते हैं और उन्हें कुछ भी बताने की आवश्यकता नहीं। किन्तु आपको देखना है आप मुख्य धारा (निर्विचारिता) में हैं अथवा नहीं। यदि आप इसमें नहीं हैं और आप कहीं किनारे पर अटके हैं तो प्रवाह, तरङ्ग आती है और आपको मुख्य धारा में ले जाती है, एक बार, दो बार, तीन बार। किन्तु यदि आप फिर भी किनारे पर आकर अटक जाते हैं, तब आप कहते हैं "माता जी, मेरा कोई कार्य सुचारु रूप से नहीं होता। वास्तव में होगा भी नहीं। कारण, आप किनारे पर अटके हैं।

श्री गणेश की जो आप स्तुति गान करते हैं वह अत्यन्त सुन्दर है। इसमें कहते हैं "मुख्य धारा (प्रवाह) में प्रवाहित................" जिसका अर्थ है प्रकाशमान मुख्य धारा (प्र+वाह)। आप इसमें अपनी पृथक् लहर, तरङ्ग न मिलायें। श्री गणेश की आरती में यह भी आता है "निर्वाणी रक्षवे" अर्थात् मृत्यु के समय मेरी रक्षा करें। आप

यह भी कहते हैं "रक्षः रक्षः परमेश्वरः" हे परमात्मा, आप मेरी रक्षा करें। किन्तु आप स्वयं ही अपनी रक्षा करना चाहते हैं। फिर परमात्मा आपकी रक्षा क्यों करें? वह (परमात्मा) कहते हैं "उसे अपनी रक्षा अपने आप ही करने दो।" मैं इस बात पर बल देना चाहती हूँ कि आपको गहराई में जाना सीखना चाहिये और निर्विचारिता में ही सब कुछ प्राप्त करना चाहिये। तभी आप निर्विकल्प स्थिति प्राप्त कर सकते हैं।

आपको निरासक्त रहना चाहिये। यहाँ भारत में लोग कहते हैं "मेरा बेटा, मेरी बेटी।" इङ्गलेंड में इसके विपरीत होता है। वहाँ बेटा, बेटी किसी से कोई लगाव (आसक्ति) नहीं होती। वे केवल अपने स्वयं के बारे में सोचते हैं। यहाँ हर चीज में 'मेरा, मेरा' मेरा लड़का, मेरी लड़की, मेरा मकान और अन्त में विचारों में केवल 'मैं' और 'मेरा' ही बाकी रह जाता है, इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं। आपको कहना चाहिये मेरा कुछ भी नहीं है, सब कुछ आपका ही है। सन्त कबीर कहते हैं "जब तक बकरी जीवित रहती है तब तक वह 'मैं', 'मैं' करती है। किन्तु उसको मारने के बाद उसकी आँतों के तारों से जो ताँत (जिससे धुनिया रूई धुनता है) बनती है। उसमें से 'तू ही-तू ही' आवाज आती है। आपको भी 'तू ही-तू ही' भावना में मग्न रहना चाहिए। जब आप 'मैं नहीं हूँ' मेरा कोई अस्तित्व नहीं है' इस भावना में दृढ़ स्थित हो जाते हैं तभी आप 'निः' शब्द को समझ सकेंगे।

अब 'निर्मला' नाम के अन्तिम अक्षर 'ला' के विषय में विचार करें। मेरा दूसरा नाम है 'ललिता'। यह देवी का आशीर्वाद है। यह उसका आयुध (शस्त्र) है। जब 'ला' अर्थात् 'देवी' ललिता रूप धारण करती है अथवा जब शक्ति ललित अर्थात् क्रियाशील रूप में परिणत होती है अर्थात् जब उस में चैतन्य लहरियाँ प्रवाहित होती हैं जो आप अपनी हथेलियों पर अनुभव कर रहे हैं, वह शक्ति 'ललिता शक्ति' है। यह सौंदय एवं प्रेम से परिपूर्ण है। जब प्रेम की शक्ति जागृत होती है तब वह 'ला' शक्ति बन जाती है। यह आपको चारों ओर से घेर लेती है। जब वह क्रियाशील होती है तब चिन्ता कैसी? तब आपकी कितनी शक्ति होती है? क्या आप वृक्ष से एक फल भी बना सकते हैं। फल की तो बात क्या, आप एक पत्ता अथवा जड़ भी नहीं बना सकते। केवल मात्र 'ला' शक्ति यह सब कार्य करती है। आपको जो आत्म-साक्षात्कार प्राप्त हुआ है वह भी इसी शक्ति का काम है। इसी शक्ति से 'निः' तथा 'म' (निर्मला नाम के प्रथम व द्वितीय अंश) शक्तियों का जन्म हुआ है। 'निः' शक्ति श्री ब्रह्मदेव की श्री सरस्वती शक्ति है। सरस्वती शक्ति में आप को 'निः' के गुण अर्जन(प्राप्त)करने चाहिये। 'निः' शक्ति प्राप्त करने का अर्थ है पूर्णतः निरासक्त बनना। आपको पूरी तरह निरासक्त बनना चाहिये।

'ला' शक्ति में प्रेम का समावेश (सम्मिलित) है वह हमारा दूसरों से नाता जोड़ती है। 'ल' शब्द 'ललाम', 'लावन्य' में आता है। 'ला' शब्द में उसका अपना ही विशेष माधुर्य है और आपको दूसरों को उससे (माधुर्य से) प्रभावित करना चाहिये। दूसरों से बातचीत करते समय आपको इस शक्ति का प्रयोग करना चाहिये। चराचर में यह प्रेम की शक्ति व्याप्त है। ऐसी स्थिति में आपका क्या कर्त्तव्य है? आपको अपने सारे विचार प्रथम (निः) शक्ति पर छोड़ देने चाहियें क्योंकि विचारों का जन्म उस प्रथम शक्ति से ही होता है। अन्तिम(ला) शक्ति, जो प्रेम और सौंदर्य की शक्ति है, उससे आप को प्रेम के आनन्द का रसास्वादन करना चाहिये। यह कैसे करें? अपने आपको दूसरों के प्रति प्रेम-भाव में भूल जायें, उस भाव में खो जायें। क्या किसी ने अनुमान लगाया है कि वह दूसरों से कितना प्रेम करता है? यह बढ़ता ही रहना चाहिये। आप दूसरों को कितना प्यार करते हैं और इस भाव में कितना आनन्द लेते हैं? क्या इस बारे में आपने सोचा है? मानवों के विषय में मैं

कह नहीं सकती, किन्तु अपने स्वयं के विषय में मैं कह सकती हूँ कि मैं दूसरों से प्रेम करने में अत्यन्त आनन्द अनुभव करती हूँ। अनुभव करें, कैसे चारों ओर प्रेम की गङ्गा बह रही है, वह अनुभूति कितनी आनन्ददायक है। एक गायक को देखिये, वह कैसे अपने स्वयं के राग में अपने आपको भूल जाता है, उसमें खो जाता है और सर्वत्र उस सङ्गीत को प्रवाहित होते अनुभव करता है। इसी भाँति प्रेम भी अबाधित रूप से प्रवाहित होना चाहिये। अतः आप 'ललाम' शक्ति, जो चैतन्य लहरियों के रूप में विशुद्ध दिव्य प्रेम की शक्ति है उसे पहले अपने भीतर जागृत करें।

आप देखें कि आप दूसरों की ओर किस दृष्टि से देखते हैं। कुछ निम्न स्तर के लोग दूसरों से कुछ चुराने अथवा उनसे कुछ लाभ उठाने के भाव से देखते हैं, कुछ दूसरों के दोषों को देखते हैं। पता नहीं इसमें उन्हें क्या आनन्द आता है। इस भाँति वे अकेले, अलग-थलग हो जाते हैं और फिर कष्ट भोगते हैं। यह स्वयं कष्टों को निमन्त्रण देना है। मुझे तो सबसे मिलने, भेंट करने में आनन्द आता है।

आपको 'ललाम' शक्ति का जो चैतन्य लहरी रूप में दिव्य प्रेम की शक्ति है—उपयोग करना चाहिये। दूसरे व्यक्ति को देखने मात्र से आप निर्विचारिता में पहुँच जायं। इससे दूसरा व्यक्ति भी निर्विचार हो जायेगा। अतः आप अपने को एवं दूसरे को भी विशुद्ध दिव्य प्रेम का बन्धन दें। 'निः' शक्ति और 'ला' शक्ति को बँधने दें। 'ला' शक्ति अर्थात् चैतन्य लहरियों के रूप में प्रेम की शक्ति को 'निः' शक्ति अर्थात् निर्विचारिता में पहुँचाना, परिणत करना है। दोनों को बन्धन देना लाभप्रद है। बहुत से लोगों से, जो बड़े अभिमानी हैं अथवा जो सोचते हैं कि वे बड़े काम करने वाले, कर्मवीर हैं, उनसे मैं अपनी बायें पार्श्व (side) को उठाने को बताती हूँ। इस भाँति हम अपने स्वयं के पञ्च तत्त्वों (पृथ्वी, जल, तेज, वायु और आकाश) में अपने स्वयं के विशुद्ध दिव्य प्रेम को भरते हैं, संचारित करते हैं। अपने हृदय के प्रेम की शक्ति (हमारा बायाँ पार्श्व) को अपनी क्रिया शक्ति (हमारा दायाँ पार्श्व) में पहुँचाना चाहिये, जैसे आप कपड़े पर रंगों से चित्रण करते हैं। जब इस भाँति क्रिया शक्ति में प्रेम शक्ति का सम्मिश्रण किया जाता है तब वह व्यक्ति अत्यन्त मधुर बन जाता है और क्रमशः वह माधुर्य, प्रेम उसके व्यक्तित्व और उसके आचरणों में प्रकाशमान होता है। वह प्रेम प्रवाहित होकर दूसरों को प्रभावित करता है और उसकी प्रत्येक क्रिया अत्यन्त रसमय हो जाती है। वह व्यक्ति इतना आकर्षणयुक्त बन जाता है कि आप घण्टों उसके सहवास में आनन्द और प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। आपका प्रेम दूसरों को आनन्ददायक और दूसरों के मन को जीतने वाला बनना चाहिये। इसके फलस्वरूप सब आपके मित्र बन जाते हैं और परस्पर प्रेम बढ़ता है। प्रत्येक अनुभव करता है कि एक स्थान है जहाँ उसे प्रेम और वात्सल्य मिल सकता है। अतः आपको प्रेम की ईश्वरीय शक्ति को अपने भीतर विकसित करना चाहिये।

हमें सदैव निर्विचारिता ('निः' शक्ति) में रहना चाहिये। जब भी कोई विचार आये तो सोचिये ईश्वर के प्रेमरूपी पवित्र गङ्गा में यह गन्द कहाँ से आ गई? ऐसी चित्त-वृत्ति से हमारी 'ला' शक्ति अर्थात् दिव्य प्रेम की शक्ति सदैव स्वच्छ, निर्मल रहेगी और उस स्वच्छता के आनन्द में हम विभोर रहेंगे।

आप दूसरों की टीका-टिप्पणी (criticism) न करें। यदि आप मुझसे किसी व्यक्ति के विषय में पूछें तो मैं केवल उसकी कुण्डलिनी की अवस्था के विषय में बता सकती हूँ अथवा उसका कौन सा चक्र इस समय पकड़ा हुआ है अथवा बहुधा पकड़ा रहता है। इसके अतिरिक्त मैं कुछ नहीं समझ सकती कि

वह कैसा है, उसका स्वभाव कैसा है, इत्यादि। यदि इस विषय में मुझसे पूछा जाय तो मैं कहूँगी, स्वभाव होता क्या है? यह परिवर्तनशील होता है। नदी इस समय यहाँ बह रही है। बाद में उसका बहाव कहाँ होगा, कौन बता सकता है? इस समय आप कहाँ हैं? यही विचार करने की बात है। आप नदी के इस किनारे पर खड़े हैं तो आपको विचित्र लगता है कि नदी यहाँ बह रही है। मैं समुद्र की दिशा में खड़ी हूँ। इस कारण मैं जानती हूँ इसका उद्गम-स्थल कौन सा है। अतः आप किसी को भी व्यर्थ, निकम्मा न कहें। प्रत्येक व्यक्ति बदलता रहता है, यह अवश्य होता है। सहजयोग का कार्य परिवर्तन लाना है। सहजयोग में विश्वास करने वाले व्यक्तियों को किसी को नहीं कहना चाहिये कि वह बेकार हो गया है। प्रत्येक को स्वतन्त्रता होनी चाहिये। आप सब जानते हैं हमारी वर्तमान स्थिति क्या है। यदि आप इस भाँति सोचेंगे तो आप न केवल अपने स्वयं का आत्म-सम्मान करते हैं, बल्कि दूसरों का भी सम्मान करते हैं। जिसमें आत्म-सम्मान नहीं है, वह दूसरों का कभी आदर नहीं कर सकता।

हमें ललाम शक्ति का विकास करना चाहिये। एक पुस्तक लिखकर भी मैं इसका आनन्द पर्याप्त रूप से वर्णन नहीं कर सकती क्योंकि सौंदर्य को प्रकट करने के लिये शब्द असमर्थ हैं। अर्थात्, यदि आपको 'मुस्कान' का वर्णन करना हो तो आप केवल कह सकते हैं कि स्नायु कैसे आन्दोलन (हरकत) करते हैं। आप उसके प्रभाव को नहीं बता सकते। यह तो केवल अनुभव की वस्तु है। आप केवल इस शक्ति को जाग्रत और विकसित होने का अवसर दें।

'ललाम' शक्ति से मनुष्य को एक प्रकार का सौंदर्य, एक भव्यता और स्वाभाव में माधुर्य प्राप्त होता है। इस शक्ति को अपने वचन, कर्म तथा अन्य क्रिया-कलापों में विकसित करने का प्रयास करें। कुछ लोगों का रोष भी मनोहारी होता है। इस मधुर, मनोहारी शक्ति को 'ललित' शक्ति कहते हैं। लोगों ने इसके भाव को बिल्कुल विकृत कर कर दिया है। वे कहते हैं यह संहार की शक्ति है। किन्तु यह बिल्कुल ठीक नहीं है। यह शक्ति अति मनोरम, सृजनात्मक और कलात्मक है। मानो आपने एक बीज बोया। उसके कुछ अंश नष्ट हो जाते हैं, जिसे 'ललित' शक्ति कहते हैं। किन्तु यह विनाश अत्यन्त कोमल और सरल होता है। तब बीज उग कर एक वृक्ष बनता है जिसमें पत्ते होते हैं। फिर पत्ते झड़ते हैं। यह क्रिया भी अत्यन्त सुकोमल व सरल होती है। तब फूल आते हैं। जब फूल फल बनते हैं, तब उनके अंश झड़ कर गिर जाते हैं और तब फल आते हैं। उन फलों को भी खाने के लिये काटा जाता है। खाने पर आपको स्वाद प्राप्त होता है। वह भी यही शक्ति है। इस प्रकार ये दोनों शक्तियाँ काम करती हैं। आप जानते हैं बिना काटे, सँवारे आप कोई मूर्ति नहीं बना सकते। यदि आप समझ लें कि यह काटना सँवारना भी उसी जाति की क्रिया है तो यदि आपको कभी ऐसा करना पड़े तो आपको बुरा अनुभव नहीं करना चाहिए। वह भी आवश्यक है। किन्तु एक कलाकार इसे कलापूर्ण ढंग से करता है और कला हीन व्यक्ति इसे बेढंगे तरीके से करता है। सो आप में कितनी कला है इस पर यह शक्ति निर्भर करती है।

कभी आप एक चित्र को देखते हैं और आपकी इच्छा करती है आप इसको ओर देखते ही रहें। यदि कोई पूछे इस चित्र में क्या विशेषता है तो आप शब्दों में नहीं बता सकते। आप बस उन्हें निहारते हैं। कुछ चित्र ऐसे होते हैं कि आप उनकी ओर देखने मात्र से निर्विचार हो जाते हैं। इस निर्विचार अवस्था में आप उसके आनन्द का रसास्वादन करते हैं। यह अवस्था सर्वोत्कृष्ट है। इसकी किसी अन्य वस्तु से तुलना अथवा मुस्करा कर व्यक्त करने के स्थान पर आपको इस स्थिति के आनन्द का मन भरकर रसास्वादन करना ही उचित है।

इसका बर्णन करने के लिये न कोई शब्द है, न कोई भाव-भंगी (मुखाकृति) पर्याप्त है। आपको इसका भीतर अनुभव करना है। सबको यह अनुभव लाभ होना चाहिए।

'नि:' और 'ला' के मध्य में 'म' शब्द अत्यन्त रोचक है। 'म' महालक्ष्मी का प्रथम अक्षर है। 'म' धर्म (पवित्र आचरण) की शक्ति है और हमारी उत्क्रान्ति की भी। 'म' शक्ति में आपको समझना होता है, फिर उसे आत्मसात करना होता है और पूर्णता (mastery) कुशलता, प्राप्त करनी होती है। उदाहरण के लिये, एक कलाकार में 'ल' शक्ति से उसके सृजन का विचार अंकुरित होता है 'नि' शक्ति द्वारा वह उसका निर्माण करता है और 'म' शक्ति के द्वारा वह उसे अपने विचार के अनुरूप बनाता है। प्रत्येक पग पर वह देखता है कि क्या यह उसके विचार के अनुरूप है और यदि नहीं तो वह उसमें सुधार करने की कोशिश करता है। वह यह बार-बार करता है। यह 'म' शक्ति है अर्थात् यदि कोई वस्तु ठीक नहीं है तो एक बार, दो बार, बार-बार करें।

इस सुधार कार्य में परिश्रम लगता है। हमें अपने स्वयं का भी सुधार करना चाहिए। यदि यह न होता तो उत्क्रान्ति की क्रिया असम्भव थी। इस के लिये परमात्मा को महान् परिश्रम करना पड़ता है। हमें 'म' शक्ति अर्जित करनी है और उसे संभाल कर रखना है। यदि यह न किया जाय तो दूसरी दोनों शक्तियां समाप्त हो जाती हैं, क्योंकि यह शक्ति सन्तुलन बिन्दु (centre of gravity) है। आपको सन्तुलन बिन्दु पर स्थित रहना चाहिये और हमारी उत्क्रान्ति का सन्तुलन बिन्दु 'म' शक्ति है। अन्य दोनों शक्तियां तभी आपके भीतर सक्रिय होंगी जब आप उत्क्रान्ति शक्ति के अनुरूप उन्नति करें। किन्तु उसके लिये आपको 'म' शक्ति को पूर्णत: समझना होगा और उसे विकसित करना होगा।

जब तक आप आत्म-साक्षात्कार प्राप्त नहीं हैं तब तक आप कह सकते हैं कि यदि ईश्वर आपसे प्रेम करते हैं तो उन्हें आपके पास आना चाहिये, किन्तु साक्षात्कार-प्राप्ति के पश्चात् आप ऐसा न कह सकेंगे। क्योंकि 'म' शक्ति के बल पर आपको दूसरी दो शक्तियों का सन्तुलन करना है। संगीत में आप को रागों का सन्तुलन करना पड़ता है, चित्रकला में आपको रङ्गों का सन्तुलन करना पड़ता है। इसी भाँति आपको 'नि.' और 'ला' शक्तियों का सन्तुलन करना आवश्यक है। इस सन्तुलन प्राप्ति के लिये आपको परिश्रम करना पड़ेगा। अनेक बार आप वह खो बैठते हैं। जो सहजयोगी इस सन्तुलन को बनाये रखता है वह उच्चतम स्तर पर पहुँच जाता है।

बहुत भावुक सहजयोगी ठीक नहीं। इसी तरह बहुत ज्यादा कामों में फँसा रहने वाला सहजयोगी भी ठीक नहीं। आपको अपने प्रेम की शक्ति को सक्रिय करना चाहिये और देखना चाहिये अब तक वह कैसी क्रियाशील रही है। उदाहरणार्थ, मैं किसी एक ढंग से काम करती हूँ किन्तु उसमें भी मैं प्रत्येक बार कुछ बदल कर देती हूँ। आपने देखा होगा कि हर बार कुछ नवीनता, कोई नया तरीका होता है। यदि एक तरीके से काम नहीं चलता, दूसरा तरीका अपनाइये। यदि यह भी असफल रहता है तो और कोई ढूँढिये। किसी भी पद्धति पर अटल नहीं होना चाहिये। आप प्रात: उठते हैं, सिंदूर लगाते हैं, श्री माँ को नमस्कार करते हैं। यह सब यान्त्रिक (mechanical) होता है। यह सजीव प्रक्रिया नहीं है। सजीव प्रक्रिया में आपको नित्य नई पद्धतियां खोजनी होंगी। मैं सदैव वृक्ष की जड़ का उदाहरण देती हूँ। बाधाओं से मोड़ लेते हुए, बचते हुए, यह क्रमश: नीचे और नीचे पृथ्वी के भीतर उतरती चली जाती है। यह बाधाओं से झगड़ती नहीं। बाधाओं के बिना जड़ें वृक्ष को सँभाल भी नहीं सकती थीं। अत: समस्याएँ, बाधाएँ आवश्यक हैं। वे न हों तो आप उन्नति भी नहीं कर सकते। वह शक्ति, जो आपको बाधाओं पर विजय पाना

सिखाती है, वह 'म' शक्ति है। अतः यह 'म' शक्ति अर्थात् माँ की शक्ति है। उसके लिये प्रथम आवश्यक वस्तु है बुद्धिमानी।

सोचिये कोई व्यक्ति बड़ा कोमल स्वभाव है और कहता है, 'माँ' मैं अत्यन्त मृदु हूँ, मैं क्या कर सकता हूँ। मैं उससे कहती हूँ अपने को बदलो और एक सिंह बनो। यदि कोई दूसरा व्यक्ति सिंह है, तो मैं उसे बकरी बनने को कहती हूँ। अन्यथा काम नहीं चलता। आपको अपने तरीके बदलने होंगे। जो व्यक्ति अपने तरीके नहीं बदल सकता, वह सहजयोग नहीं फैला सकता, क्योंकि वह एक ही तरीके पर जमा रहता है जिससे लोग ऊब जाते हैं। आपको नये मार्ग खोजने होंगे। इसी भाँति 'म' शक्ति कार्य करती है। महिलायें इसमें निपुण होती हैं। वे प्रतिदिन नये व्यञ्जन (भोज्य पदार्थ, recipes) बनाती हैं और पति जानने को उत्सुक रहते हैं कि आज क्या बना है।

यह वह शक्ति है जिसके द्वारा आप अपना सन्तुलन और एकाग्रता प्राप्त करते हैं। जब आप इस शक्ति को उच्चतम स्तर पर विकसित कर लेते हैं तब आप अपने सन्तुलन तथा बुद्धि स्तर से चैतन्य लहरियाँ अनुभव करते हैं। यदि आप में बुद्धिमानी नहीं है तो आप में उक्त लहरियाँ प्रभावित नहीं होंगी।

अधिकतम चैतन्य लहरियों-सम्पन्न व्यक्ति निश्चित बुद्धिमान व्यक्ति होता है। वास्तव में यह बुद्धिमत्ता ही है जो प्रवाहित हो रही है। इस माप-दण्ड से यह निश्चित हो सकता है कि आप किस स्तर के सहजयोगी हैं।

जब आप सन्तुलन तथा बुद्धि खो देते हैं तो स्वाभाविक रूप से आपके चक्र पकड़े (बाधाग्रस्त) जाते हैं। जब आपके चक्र बाधाग्रस्त हों तो समझ लीजिये आपका सन्तुलन बिगड़ गया है। असन्तुलन संकेत करता है कि 'म' शक्ति आप में दुर्बल है। 'माताजी' अर्थ वाचक किसी भी शुभ नाम का प्रथम अक्षर 'म' होता है और यह कार्य मेरे भीतर 'म' शक्ति द्वारा किया गया है। यदि केवल 'नि' और 'ल' दो शक्तियाँ ही होतीं, तो यह कार्य सम्भव नहीं था। मैं तीनों शक्तियों सहित आई हूँ, किन्तु 'म' शक्ति सर्वोच्च है। आपने देखा 'म' 'शक्ति' माँ की शक्ति है। यह सिद्ध करना होगा कि वह आपकी माँ है। यदि कोई आकर कहे "मैं आपकी माँ हूँ" तो क्या आप मान लेंगे ? नहीं, आप स्वीकार नहीं करेंगे। मातृत्व को सिद्ध करना होगा।

माँ क्या है ?

माँ ने अपने हृदय में हमें स्थान दिया है। हमें माँ पर और माँ को हम पर पूर्ण अधिकार है क्योंकि वह हमें अपार प्यार करती है। उसका प्रेम नितान्त निःस्वार्थपूर्ण है। वह सदैव हमारी मङ्गल कामना करती है और उसके हृदय में हमारे लिये वात्सल्य के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। माँ में आपकी आस्था तभी प्राप्त होगी जब आप यह समझ लेंगे कि आपकी वास्तविक शोभा, अर्थात् आपकी आत्मा, उनमें ही वास करती है। आप दूसरों को यह सिद्ध करके दिखायें। सहजयोगी में ऐसी सामर्थ्य होनी चाहिये। अन्य लोगों को पता हो कि वह एक बुद्धिमान व्यक्ति है। उसके लिये आप में प्रेम और क्रियाशीलता दोनों शक्तियों में सन्तुलन आवश्यक है। वह इतना मनोहारी होना चाहिये कि बिना जाने अन्य लोग ऐसे व्यक्ति से प्रभावित हों। सहजयोगी को यह गुण अर्जन करना चाहिये।

घर जाकर आप विचार करें कि इन तीनों 'नि', 'ला' और 'म' शक्तियों को कैसे सक्रिय कर प्रयोग करें। 'नि:' शक्ति आपके परिवार में पूर्ण सौंदर्य और गम्भीरता, गहराई लायेगी। जन-सम्पर्क के आप नये-नये मार्ग और साधन खोजें। इन शक्तियों का आप सहजयोग के प्रचार के लिये उपयोग करें। उनके उचित् उपयोग के लिये आपकी 'नि:' शक्ति,

अर्थात् क्रियाशक्ति, अत्यन्त बलशाली होनी चाहिये। यद्यपि आप में 'ला' शक्ति अर्थात् प्रेम की शक्ति होनी चाहिये, किन्तु यह 'नि:' शक्ति के साथ-साथ संयुक्त रूप से क्रियान्वित होनी चाहिये। यदि एक तरीका सफल नहीं होता, तो दूसरा तरीका अपनाइये। पहले लाल और पीला लें, यदि यह उपयुक्त नहीं रहता तो लाल और हरा उपयोग करें और यदि यह भी ठीक नहीं रहता तो और अन्य कोई उपयोग करें। हठी होना, किसी बात पर अड़ना बुद्धिमानी नहीं है। हठधर्मी व्यक्ति सहजयोग में कुछ नहीं कर सकता। आपका उद्देश्य तो केवल सहजयोग का प्रचार करना है, तो विभिन्न मार्ग अवलम्बन कर देखिये। आप जो भी आग्रह करते हैं वही मैं स्वीकार कर लेती हूँ क्योंकि मैं जानती हूँ कि साधारण मानव मेरी भाँति नहीं है। हठधर्मी व्यक्ति क्या कर बैठे, कहा नहीं जा सकता। आप उसे पराकाष्ठा अर्थात् हद् पर जाने की स्थिति न आने दें। 'म' शक्ति से मैं यह सब जानती हूँ। किन्तु आप सहजयोगियों को किसी एक बात पर हठ नहीं करना चाहिये। आपकी माँ हठ नहीं करती। जो भी स्थिति हो, स्वीकार कर लें। आप जो भी करें, ध्यान रखें आप एक महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। मुझ में कोई इच्छा नहीं है। मुझ में 'नि:', 'ला', 'म' कोई शक्ति नहीं है। मुझ में कुछ भी नहीं है। मैं यह भी नहीं जानती मैं स्वयं उन शक्तियों की मूर्त्तस्वरूप हूँ। मैं केवल सब खेल देखती हूँ।

जब जीवन में इस प्रकार परिवर्तन आ जायेगा तब मनुष्यों में सिद्ध सहजयोगीजन होंगे जिन्हें सहजयोग में पूर्ण सिद्धता, निपुणता प्राप्त होगी। अभी तक वे सिद्ध नहीं हुये हैं। आपको सिद्धता प्राप्त करनी है। सिद्ध सहजयोगी वह है जो पूर्ण रूप से परमात्मा से एकरूप हो जाये और उसे अपने वश में कर ले। उसको उसके लिये सर्वस्व अर्पित करना होता है। मैं जा रही हूँ। उसके बाद देखेंगे आप अपनी सिद्धता का किस भाँति और किस क्षेत्र में उपयोग करते हैं।

कभी-कभी मैं आपको कुछ बातों के लिये मना करती हूँ। आपको उसका बुरा नहीं मानना चाहिये। 'म' शक्ति के सिद्धान्त अनुसार आपको निराश नहीं होना चाहिये, क्योंकि आपका मार्ग दर्शन करना मेरा कर्तव्य है। कुछ लोग निराश हो जाते हैं। आप ध्यान रखें आपको सिद्ध बनना है। दूसरे स्वीकार करें आप सिद्ध हैं। ज्यों ही वे आपको देखें उन्हें स्पष्ट हो आप सिद्ध हैं। आप इसके लिये यत्न करें। यदि यह होता है तो सब शुभ होगा।

एक दिन मैंने आपसे कहा था कि आप अपने सब मित्र और सम्बन्धियों को मध्याह्न अथवा रात्रि भोज के लिये पूजा या किसी अन्य कार्यक्रम के लिये आमन्त्रित करें। साथ ही कुछ सहजयोगियों को भी आमन्त्रित करें और अपने सब अतिथियों को आत्म-साक्षात्कार प्रदान करें। यदि एक साल तक आप ऐसा करें तो बड़ा लाभकारी होगा।

सबको अनेक आशीर्वाद।

लक्ष्मी तत्त्व

नई दिल्ली
९ मार्च १९७९

कृष्ण ने गीता में कहा है कि 'योगक्षेम वहाम्यहम्'। इसका मतलब है—पहले योग। पहले वो क्षेम कहते, (पर) पहले उन्होंने 'योग' कहा, और उसके बाद 'क्षेम'। क्षेम का मतलब होता है, आपका well-being (कुशल-मङ्गल) आपका लक्ष्मी तत्त्व। तो पहले योग होना चाहिये।

जब तक योग नहीं होता तब तक परमात्मा से आपसे कोई मतलब नहीं। आपको पहले योग, माने 'परमात्मा से मिलन' होना चाहिये, आपके अन्दर आत्मा जागृत होनी चाहिये। जब आपके अन्दर आत्मा जागृत हो जाती है, तब आप परमात्मा के दरबार में असल में जाते हैं, नहीं तो आप रट्टू तोते के जैसे कहा करते हैं। जो कुछ भी बात होती है, बाहर ही रह जाती है। अन्दर का आपा जब तक आप जानते नहीं, जब तक आप अपने को पहचानते नहीं, तब तक आप परमात्मा के राज्य में आते नहीं और इसीलिये आप उसके अधिकारी नहीं हैं जो परमात्मा ने कहा है।

बहुत से लोग परमात्मा को इसका दोष देते हैं, कि हम तो इतनी परमात्मा की भक्ति कर रहे हैं, इतनी हम पूजा कर रहे हैं, इतने सर के बल खड़े होते हैं, ये करते हैं, वो करते हैं, धूप चढ़ाते हैं, सुबह से शाम तक रटते बैठते हैं, तो भी हमें परमात्मा क्यों नहीं मिलते? परमात्मा से बात करने के लिये, आपका उनसे 'सम्बन्ध' होना चाहिये, connection होना चाहिये। जब तक आपका योग घटित नहीं होता, तब तक क्षेम नहीं होता। क्षेम का मतलब है, आपकी चारों तरफ़ से रक्षा; लक्ष्मी तत्त्व की जागृति।

कृष्ण ने सिर्फ़ ये कहा है कि 'वहाम्यहम्'—"मैं करूँगा", पर कैसे करूँगा, सो नहीं कहा। सो मैं आपसे बताती हूँ, वह किस तरह से होता है।

जब योग घटित होता है, तब कुण्डलिनी त्रिकोणाकार अस्थि से उठकर के ब्रह्मरन्ध्र को छेदती है, तब उसमें ज्योति आ जाती है, क्योंकि आत्मा ज्योति पा लेती है। और उस ज्योत के कारण नाभि चक्र में जो 'लक्ष्मी तत्त्व' है वह जागृत हो जाता है। जैसे ही लक्ष्मी तत्त्व आपमें जागृत हो जाएगा, चारों तरफ़ से आप देखियेगा कि आपकी खुशहाली होने लगेगी।

कोई आदमी रईस हो जाए—जिसे हम 'पैसे-वाला' कहते हैं, जरूरी नहीं कि वह 'खुशहाल' है। अधिकतर पैसे वाले लोग महादुःखी होते हैं। जितना पैसा होगा, उतने ही वो गधे होते हैं, उतनी ही उनके घर के अन्दर गन्दगी आती है—शराब, दुनिया भर की चीज, मक्कारीपन, झूठापन—हर तरह की चीज उनके अन्दर रहती है। हर समय मन में डर, भय-कभी सरकार आकर पकड़ती है, कि खाती है, कि हमारा पैसा जाता है, कि ये होता है,

वो होता है। जो बहुत रईस लोग हैं, तो भी कोई लक्ष्मी पति नहीं क्योंकि उनके अन्दर लक्ष्मी का तत्त्व नहीं जागृत हुआ है। सिर्फ़ पैसा कमा लिया। पैसा उनके लिये मिट्टी जैसा है, उससे कोई उनको सुख नहीं है।

लक्ष्मी का तत्त्व समझना चाहिये।

मैंने पिछली मर्तबा बताया था कि लक्ष्मी जी कैसी बनी हैं। उनके हाथ में दो कमल हैं—वो गुलाबी रंग के हैं और एक हाथ से दान करती हैं और एक हाथ से वो आश्रय देती हैं। गुलाबी रंग का द्योतक होता है—'प्रेम'। जिस मनुष्य के हृदय में प्रेम नहीं है वो लक्ष्मीपति नहीं हो सकता। उस का घर ऐसा होना चाहिये जैसे कमल का फूल होता है। कमल के फूल के अन्दर भौंरे जैसा जानवर, जो कि बिल्कुल शुष्क होता है—उसके काँटे चुभते हैं जरा आप हाथ में लीजिये तो—उसको तक वो स्थान देती हैं। अपनी गोद में उसको सुलाती हैं उसको शान्ति देती हैं।

लक्ष्मीपति का मतलब है कि उसका दिल बहुत बड़ा है। जो अपने घर आए हुए अतिथियों को, किसी को भी अत्यन्त आनन्ददायी होता है—वो लक्ष्मीपति है। लेकिन अधिकतर आप रईस लोग देखते हैं कि महाभिखारी होते हैं। उनके घर आप जाइये तो उनकी एकदम जान निकल जाती है, कि 'मेरे दो पैसे खर्च हो जाएँगे'। जिस आदमी को हर समय ये फ़िक्र लगी रहती है कि 'मेरे आज चार पैसे यहाँ खर्च हो रहे हैं, दो पैसे वहाँ खर्च हो रहे हैं, इसको जोड़ के रखो, उसको कहाँ बचाऊँ, उस को क्या करूँ'—वो आदमी लक्ष्मीपति नहीं। कञ्जूस आदमी लक्ष्मी पति नहीं हो सकता। जो कञ्जूस है, वो कञ्जूस है, तो लक्ष्मीपति नहीं है। कञ्जूस आदमी दरिद्री होता है—महादरिद्री होता है। उसमें बादशाहत नहीं होती। जिस आदमी की तबियत में बादशाहत नहीं होती, उसे लक्ष्मीपति नहीं कहना चाहिये।

जो आदमी बादशाह होता है, वह चाहे ग़रीबी में रहे चाहे अमीरी में रहे, वह बादशाह होता है। वह बादशाह के जैसा रहता है। छोटी-छोटी चीज के पीछे, दो-दो कौड़ी के पीछे, इसके पीछे, उसके पीछे परेशान होने वाला लक्ष्मीपति नहीं हो सकता। इसीलिये लक्ष्मी-तत्त्व जागृत नहीं होता। इसीलिये नाभि-चक्र की बड़ी जोर की पकड़ हो जाती है। उस आदमी के अन्दर Materialism (भौतिकवाद) आ जाता है। वह जड़वादी हो जाता है। छोटी-छोटी चीज का उसे बड़ा खयाल रहता है। 'ये मेरा, ये मेरा'—ये मेरा बेटा है, ये मेरा फ़लाना है, ये ढिकाना—ये सारी चीज जिस आदमी में आ गई तो लक्ष्मीपति नहीं। इसकी चीज मारूँ कि उसकी चीज मारूँ कि ये लूँ कि वो लूँ, कि सब 'मेरे' लिये होना चाहिये—इस तरह से जो आदमी सोचता है वो भी लक्ष्मीपति नहीं।

जो दूसरों के लिये सोचता है—'अगर मेरा अच्छा आलीशान मकान है तो इसमें कितने लोग आकर बैठें। अगर मेरे पास आलीशान चीजें हैं तो कितने लोगों को आराम होगा। कैसे मैं दूसरे लोगों की मदद कर पाऊँगा। किस तरह से मैं उनको अपने हृदय में स्थान दूँगा। 'मदद' का भी सवाल नहीं उठता; आदमी यह सोचता है कि 'ये मेरे ही अपने हैं। इनके साथ जो भी करना है मैं अपने साथ ही कर रहा हूँ'—तब असल में लक्ष्मी तत्त्व जागृत हो जाता है।

कमल के जैसा उसका रहन-सहन, उसकी शक्ल होनी चाहिये। ऐसा आदमी 'सुरभित' होना चाहिये न कि उससे हर समय घमण्ड की बदबू आए। अत्यन्त 'नम्र' होना चाहिये। कमल का फूल आपने देखा है उसमें हमेशा थोड़ी-सी झुकान रहती है। कमल कभी भी तनकर खड़ा नहीं होता, उसमें थोड़ी-सी झुकान डण्ठल में आ जाती है। उसी प्रकार जो कम से कम लक्ष्मी जी के हाथ में जो कमल हैं दोनों में इसी तरह की 'सुकुमारिता' है।

दूसरों से बात करते समय तो बहुत ठण्डी तबियत से, आनन्द से, प्रेम भरा इस तरह से बात करता है—झूठा नहीं होता, तो Plastic के नहीं होते हैं, वो कमल असल में होते हैं।

ऐसा मनुष्य असल में कमल के जैसा होना चाहिये। एक हाथ से दान बहते ही रहना है, बहते ही रहना है। हमने अपने पिता को देखा है। पिता की बात हम देखते हैं, बहुत दानी आदमी थे। वो देते ही रहते थे। उनके पास कुछ ज्यादा हो जाए तो बाँटते ही रहते थे। मजा ही नहीं आता जब तक तो बाँटें नहीं। अगर उनसे कोई कहता कि 'आप आँख उठाकर नहीं देखते', तो कहने लगते कि "मैं क्या देखूँ। जो देने वाला है दे रहा है, मैं तो सिर्फ़ बीच में खड़ा हूँ—उसमें देखना क्या ? मुझे तो शर्म लगती है कि लोग कहते हैं कि 'तुम' दे रहे हो।" इस तरह का दानत्व वाला आदमी जो होता है, वो अपने लिये कुछ भी संग्रह नहीं करता है और दूसरों को बाटता रहता है, दूसरों को देता रहता है। देने में ही उसको आनन्द आता है, लेने में नहीं—यह आदमी लक्ष्मीपति है। जो अपने ही बारे में सोचता रहे—'मेरा कैसे भला होगा, मेरे बच्चों का कैसे भला होगा, मैं कैसे अच्छा होऊँगा—ऐसे आदमी को लक्ष्मीपति नहीं कहते। उसमें कोई शोभा नहीं होती, वह असल में भिखारी होता है। और लक्ष्मीपति एक हाथ से तो आश्रय देता है, अनेक को अपने घर में, जो भी आए, उससे अत्यन्त प्रेम से मिलना, उस से अत्यन्त प्रेम से, अपने बेटे जैसे उसकी सेवा करनी। उसके यहाँ नौकर-चाकर, घर में जानवर—अनेक लोग इसके आश्रय में होते हैं और वह जानते हैं कि वह हमारा आश्रय दाता है। कोई हमें तकलीफ़ होयेगी, वो हमें देखेगा। रात को उठ कर के भी देखेगा चुपके से करता है। वो ये बताता नहीं, जताता नहीं, दुनिया को दिखाता नहीं कि मैंने उनके लिये इतना कर दिया, वो कर दिया—एकदम चुपके से करता है।

परमात्मा भी हू-बहू ऐसा है। तो एक श्री स्वरूप, माँ स्वरूप बनाया हुआ है—लक्ष्मीजी का स्वरूप। एक कमल पर लक्ष्मीजी खड़ी हो जाती हैं। आप सोचिये कि एक कमल पर खड़ा होना, माने आदमी में कितनी सादगी होनी चाहिये, बिल्कुल हल्का, उसमें कोई दोष नहीं। कमल पर भी वो खड़ा हो सके—ऐसा आदमी उसे होना चाहिये, जो किसी को अपने बोझ से न दबाए। जो बहुत ही नम्र होना चाहिये। जो दिखाते फिरते हैं हमारे पास ये चीज है, वो चीज है, फ़लाना है, ढिकाना है, वो लक्ष्मीपति नहीं हो सकता। 'मातृत्व' उनमें होना चाहिये। माँ का हृदय होना चाहिये, तब उसे लक्ष्मीपति कहना चाहिये।

ये सब लक्ष्मीपति के लक्षण हैं और जब आप के अन्दर ये तत्त्व जागृत हो जाता है, तो पहली चीज आती है—'सन्तोष'। ऐसे तो किसी चीज का अन्त ही नहीं है, आप जानते हैं कि Economics (अर्थशास्त्र) में कहते हैं, कोई भी wants satiable होती ही नहीं है in general (सामान्यतया कोई भी चाहत की तृप्ति नहीं होती)। आज आपके पास ये है तो कल वो चाहिए। वो है तो वो चाहिये, वो चाहिये तो वो चाहिये। आदमी पागल जैसा दौड़ता रहता है, उसकी कोई हद ही नहीं होती। आज यह मिला, तो वो चाहिये, वो मिला तो वो चाहिये।

लेकिन आदमी को सन्तोष आता है। उसे संतोष आ जाता है। जब तक आदमी को सन्तोष नहीं आएगा, वह किसी भी चीज का मजा नहीं ले सकता। क्योंकि 'सन्तोष' जो है वह वर्तमान की चीज है present की चीज, और 'आशा' जो है Future (भविष्य) की चीज है; 'निराशा' जो है ये Past (भूतकाल) की चीज है। आप जब सन्तोष में खड़े रहते हैं तो fully satisfied, (पूर्णतया सन्तुष्ट), तब आप पूरा उसका आनन्द उठा रहे हैं, जो आपको मिला हुआ है। नहीं तो उनके पास कितना भी रहता है तो भी कहते हैं, 'अरे ! उसके

पास है—मुझे तो चाहिये।' तो काहे को मिला है ? फिर वो मिल गया तो उसको वो चाहिये। कभी भी ऐसा आदमी अपने जीवन का आनन्द नहीं उठा सकता, कभी भी वो ऊँचा नहीं उठ सकता। रात-दिन उसकी नज़र जो है ऐसी ही बढ़ती रहेगी, जो चीज़ें बिल्कुल व्यर्थ हैं, जिनका कोई भी महत्त्व नहीं जिनका जीवन में कोई भी महत्त्व नहीं, जिनका अपने जीवन के आनन्द से कोई भी सम्बन्ध नहीं, ऐसी चीज़ के पीछे वो भागता है।

पर पहले योग घटित होना चाहिये—फिर क्षेम होता है। हमारे सहजयोग में—यहाँ पर भी अनेक लोग आये हुये हैं जो कि हमारे साथ सहजयोग में रहे और जिन्होंने पाया और इसमें प्रगति की है। इनकी सबकी Financial (आर्थिक) प्रगति हुई है सबकी—A to Z। कोई-कोई लोगों के पास तो लाखों रुपया आया। जिनके पास एक रुपया नहीं था उनको लाखों रुपया मिला। ऐसे भी लोग हमारे यहाँ हैं जिन्होंने—अब देखिये, अभी भी जो आए हुए हैं अंग्रेज़ लोग, जो India (भारत) आना चाहते थे, तो इन्होंने कहा कि कैसे जाएं ? पैसा तो है इन के पास। इनकी भी बड़ी प्रगति हो गई। वैसे भी इनको बहुत पैसा-वैसा मिल गया और काफ़ी आराम से रहने लगे। तो, जब आने लगे तो इन्हें एक Firm (संस्था) ने कह दिया, 'अच्छा, तुम मुफ़्त में जाओ, हम तुम्हारा पैसा दे देंगे, क्योंकि तुम हमारा यह काम कर देना।'

छोटी-छोटी चीज़ में परमात्मा मदद करता है। और इतना रुपया आपके पास बच जाता है कि आपको समझ नहीं आता कि क्या करूँ। ये लोग पहले Drugs लेते थे, शराब लेते थे और दुनिया भर की चीज़ें करते थे। उसमें बहुत रुपया निकल जाता था। अब मैंने देखा है कि इनके घर अच्छे हो गए हैं, घरों में सब चीज़ें आ गईं, अच्छे से सब Music (सङ्गीत) सुनते हैं, सब अच्छे-अच्छे शौक इनके अन्दर आ गए। सब बढ़िया तरीक़े से रहने लग गए। इनके बाल-बच्चे अच्छे हो गए। मैंने पूछा, 'यह कैसे हुआ ?' कहने लगे कि हम सारा पैसा बर्बाद करते थे, हमें होश ही नहीं था कि हम कैसे रहते थे, कहाँ रहते थे।

इसीलिये, जो गुरुजन हो गए हैं, उन्होंने शराब और ऐसी चीज़ों को एकदम मना किया है। अब, शराब तो इतनी हानिकर चीज़ है कि इस तरफ़ से अगर बोतल आई शराब की, उस तरफ़ से लक्ष्मी जी चली गई—'सीधा' हिसाब। उन्होंने देखा कि आपकी शराब की बोतल अन्दर आ गई, उधर से वो चली गई। ऐसे आदमी को कभी भी लक्ष्मी का सुख नहीं मिल सकता। जिनके घर में शराब चलती है, उनके घर में लक्ष्मीजी का सुख नहीं हो सकता। हाँ, उनके यहाँ पैसा होगा, लेकिन लड़के रुपया उड़ाएँगे, बीवी भाग जाएगी—कुछ न कुछ गड़बड़ हो जाएगा। बच्चे भाग जाएँगे—कुछ न कुछ तमाशे होंगे। आज तक एक भी घर आप मुझे बतायें, जहाँ शराब चलती है और लोग खुशहाल हों। 'हो ही नहीं सकता।' खुशहाली शराब के बिल्कुल विरोध में रहती है।

इसीलिये गुरुजनों ने जो मना किया है—खास कर 'हरएक' ने; क्यों किया ? हमको सोचना चाहिये। आखिर वो लोग कोई पागल नहीं थे। उन्होंने हज़ार बार इस चीज़ को मना किया कि 'शराब पीना बुरी बात है। शराब मत पियो, शराब मत पियो।' शराब तो एक ऐसी चीज़ है कि ये भगवान ने पीने के लिये तो कभी भी नहीं बनाई थी, पॉलिश करने के लिये बनाई थी—पॉलिश करने के लिये। कल लोग 'फ़िनायल' पीने लगेंगे ! क्या कहें आदमी के दिमाग को ! कुछ भी पीने लग जाएं तो कौन क्या कर सकता है ? आदमी का दिमाग इतना चौपट है कि कोई भी चीज़ उसकी समझ में आ जाए, पीने लग जाएगा। उसे किसने कहा था शराब पीने के लिये ?

अब ये पॉलिश की चीज़ आप शराब के नाम

से जब पीते हैं तो आपके भी जितने भी Liver (जिगर) हैं, Intestines (अन्तड़ियाँ) हैं, सब पॉलिश हो जाते हैं। यहां तक कि Arteries (धमनियाँ) आपकी पॉलिश होकर के Stiff (सख्त) हो जाती हैं। Arteries इतनी Stiff हो जाती हैं कि उसकी जो स्नायु हैं वो अपने को स्थितिस्थापक नहीं बना सकते। माने, न तो वो बढ़ सकते हैं, न घट सकते हैं—बस जमते ही जाते हैं। Arteries जो हैं एकदम एक size की हो जाती हैं, तो खून भी नहीं चल पाता, खून भी अटक जाता है। जब कोई भी दबाव न हो, उसके ऊपर में कोई फुलाव न हो और एकदम नली जैसे बन जाए Arteries, तो उसमें क्या होगा? ऐसा पॉलिश का गुर चढ़ता जाता है जिसकी कोई हद नहीं, और मनुष्य भी पॉलिश बन जाता है। ऐसा आदमी 'बड़ा' कृत्रिम होता है। ऊपर से बड़ी अच्छाई दिखाएगा। शराबी आदमी है; ऊपर से—'वाह! बड़ा शरीफ़ है, ऐसा है, वैसा है। सब ऊपरी चीजें। जो अपने बीवी बच्चों को भूखा मार सकता है, जो अपने बीवी बच्चों से ज्यादती कर सकता है, वो आदमी कितना भी भला बाहर करके घूमे उसका क्या अर्थ निकलता है, बताइये? इसलिये शराब की इतनी मनाही की गई है, इतनी मनाही कर गए हैं, सो किस लिये कर गये हैं?

अब मुसलमानों को इतनी मनाही है शराब की लेकिन उनसे ज्यादा कोई पीता ही नहीं। क्यों मनाही कर गए? सोचना चाहिये। मोहम्मद साहब जैसे आदमी क्यों मनाही कर गए? नानक साहब इतनी मनाही कर गए—सिक्खों से ज्यादा तो लंदन में कोई पीता ही नहीं। उनके आगे तो अंग्रेज हार गए। है कि नहीं बात? कौन-से धर्म में शराब को अच्छा कहा है? कोई भी धर्म में नहीं कहा। लेकिन सब धर्म में लोग इतना ज्यादा पीते हैं और गुरुओं का अपमान करते हैं।

हमारी सारी नाभि चक्र और उसके चारों तरफ़ दस जो हमारे धर्म हैं, जो कि गुरुओं ने बनाए हैं, ये दस धर्म हमारी नाभि में होते हैं। इसीलिए इन गुरुओं ने मना किया हुआ है कि आप अपने धर्मों को बनाने के लिये, पहली चीज़ है—शराब या कोई सी भी ऐसी आदत न लगाएँ जिससे आप उसके गुलाम हो जाएँ। अगर आपको ये गुलामी करनी है, तो आप स्वतन्त्रता की बात क्यों करते हैं? लोग तो सोचते हैं कि गुलामी करना ही स्वतन्त्रता है। आपको अगर कोई मना करे कि बेटे शराब नहीं पियो तो लोग सोचते हैं कि 'देखो, ये मुझे रोकते हैं टोकते हैं, मेरी "स्व-तन्त्र-ता" छीनते हैं'। मनुष्य इतना पागल है। उसको मना इसलिये किया जाता है कि 'बेटे, तुम दूसरों गुलामी मत करो'।

जब कभी कोई बात बड़े लोग बताते हैं तो उसको विचारना चाहिये—न कि उसको रटते बैठना चाहिये, सुबह से शाम तक। उसको विचारना चाहिये, उसको सोचना चाहिये कि उन्होंने ऐसी बात 'क्यों' कही; कोई न कोई इसकी वजह हो सकती है। ऐसे इतने बड़े ऊँचे लोगों को ऐसी बात कहने की ज़रूरत क्या पड़ी थी? क्यों इस चीज़ को बार-बार उन्होंने मना किया है? ये सोचना चाहिये और विचारना चाहिये और कोई भी मनुष्य ज़रा सा भी बैठकर सोचे तो वह समझ सकता है कि इस क़दर गन्दी ये चीजें हम लोगों ने अपना ली हैं, जिस के कारण हमारे यहाँ से लक्ष्मी-तत्त्व चला गया है। भारत से तो लक्ष्मी-तत्त्व बिलकुल पूरी तरह से चला गया है। यहाँ पर लक्ष्मी-तत्त्व है ही नहीं; और जागृत करना भी बहुत कठिन है।

क्योंकि लक्ष्मी-तत्त्व जो है, वो ही परमात्मा के कृपा का पाया है। नाभि में ही विष्णुजी का जो स्थान है, और विष्णु या जिसे हम लक्ष्मी, उनकी जो शक्ति मानते हैं—इसी में हमारी खोज शुरू होती है। जब हम Amoeba (अमीबा) में रहते, तो हम खाना खोजते थे। ज़रा उससे बड़े जानवर हो गए तो और कुछ खाना पीना और सङ्ग-साथी ढूंढते हैं। उसके बाद हम इन्सान बन गए तो हम

सत्ता खोजते हैं। हम इसमें पैसा खोजते हैं। बहुत से लोग तो खाने-पीने में मरे जाते है।

बहुत-से लोग तो सुबह से शाम तक क्या खाना है, क्या नहीं खाना है, ये करना है, वो करना है। इसी में सारे बर्बाद रहते हैं। जिन लोगों को अति खाने की बीमारी होती है, वो भी लक्ष्मी-पति कैसे? वो तो भिखारी होते हैं, ऐसे तो जिनका कि दिल ही नहीं भरता। एक मुझे कहने लग गई—एक हमारे यहाँ बहू आई थीं रिश्ते में, कहने लगीं कि 'मेरे बाप के यहाँ ये था, वो था'। 'अरे !' मैंने कहा, 'तुम में तो दिखाई देना चाहिये। तुम्हारे अन्दर तो ज़रा भी सन्तोष नहीं। तुम्हें कि ये खाना चाहिये, तुमको वो खाने को चाहिये; घूमने को चाहिये। कोई सन्तोष तुम्हारे बाप ने दिया कि नहीं दिया तुमको ? अगर वाक़ई तुम्हारे बाप इतने लक्ष्मीपति थे तो कुछ तो तुम्हारे अन्दर सन्तोष होता !' "मिला तो मिला, नहीं तो नहीं मिला।"

जब ये स्थिति मनुष्य की आ जाती है—जब उसकी सत्ता खत्म हो गई, जब उसको समझ में आया कि सत्ता में नहीं रहा, पैसे में नहीं रहा, किसी चीज़ में उसे वह आनन्द नहीं मिला, जिसे खोज रहा था, तब आनन्द की खोज शुरू हो जाती है। वो भी नाभि चक्र से ही होती है। इसी खोज के कारण आज हम Amoeba (अमीबा)से इन्सान बने। और इसी खोज के कारण, जिससे हम परमात्मा को खोजते हैं, हम इन्सान से अतिमानव होते हैं। 'आपा' को पहचानते हैं। आत्मा को पहचानते हैं—इसी खोज से। इसीलिये लक्ष्मी-तत्त्व बहुत ज़रूरी चीज़ है।

और लक्ष्मी-तत्त्व जो बैठा हुआ है, उसके चारों तरफ़ 'धर्म' है। मनुष्य के दस धर्म बने हुए हैं। अब आप Modern (आधुनिक) हो गए तो आप सब धर्म उठाकर चूल्हे में डाल दीजिये। भई आप Modern हो गए। क्या कहने आपके ! लेकिन ये तो आपके अन्दर दसों धर्म हैं ही। ये 'स्थित' है, ये वहाँ है। अगर मनुष्य के दस धर्म नहीं रहे, तो वो राक्षस हो जाएगा। जैसे ये सोने का धर्म होता है कि ये खराब नहीं होता, इसी तरह से आपके अन्दर जो दस धर्म हैं, वो आपको बनाए रखते हैं—जो मानव धर्म हैं। अगर इन धर्मों की आप अवहेलना करें—और उसके उपधर्म भी हैं—तो आपका कभी भी उद्धार नहीं हो सकता, कभी भी आप पार नहीं हो सकते। पहले, जब तक आप धर्म को नहीं बनाते हैं, तब तक आप 'धर्मातीत' नहीं हो सकते—धर्म से ऊपर नहीं उठ सकते। पहले इन धर्मों को बनाना पड़ता है और इसीलिए इन गुरुओं ने बहुत मेहनत की, बहुत मेहनत करी है। इनकी मेहनत को हम लोग बिल्कुल मटियामेट कर रहे हैं, अपनी अक्ल की वजह से। सब इसको खत्म कर रहे हैं। "इन धर्मों को बनाना हमारा पहला परम कर्त्तव्य है।"

लेकिन आजकल के जो गुरु निकले हुए हैं, उन को आपसे या धर्म से कोई मतलब नहीं है—'आप शराब पीते हैं ? लेओ और हमको भी एक बोतल लाओ, और आपको कोई हर्ज़ा नहीं। अच्छा, आप औरतें रख रहे हैं ? तो ठीक है, दस औरतें रखिये और एक हमारे पास भी भिजवा दीजिये, या अपने बीवी-बच्चे हमारे पास भेज दीजिये। आपकी जेब में जितना रुपया है, हमारे पास दे दीजिये—हमें आप से कोई मतलब नहीं। आपको जो भी धन्धा करना है करें। आपके बस पर्स में जितना पैसा है इधर जमा कर दीजिये, फिर आप जैसा है, वैसा करें ! आज ही एक क़िस्सा है, बता रही थीं हमारे साथ आई हुई हैं कि इनकी बहन, राजकन्या है वो भी, और उनके पति बहुत शराबी, कबाबी, बहुत बुरे आदमी थे। और तो एक गुरु के शिष्य थे। इन्होंने जाकर उनसे बताया कि ये आदमी मारता है, पीटता है, सताता है, औरत रख ली है। उससे कुछ कहो। वो औरतें रखता है। और राजकुमार है, लेकिन क्या करें उसका इतना खराब हो रहा है।' तो कहने लगे कि रहने दो, तुमको क्या करना है ? उनसे रुपये ऐंठते गए, रुपया ऐंठते गए। 'गुरुजी' को मतलब उनके रुपये से !

ये कोई गुरु हुए जो आपसे रुपये ऐंठते हैं ? आप के गुरु हो ही कैसे सकते हैं ? जो आपके पैसे के बूते पर रहते हैं। ये तो Parasites हैं। आपके नौकरों से भी गए गुजरे हैं। कम से कम आपके नौकर आप का कुछ काम करते हैं। जो लोग आपसे रुपया ले करके जीते हैं, ऐसे दुष्टों को तो बिल्कुल राक्षसों की योनी में डालना चाहिए। और ऐसे दुष्टों के पास जाने वाले लोग भी महामूर्ख हैं, मैं कहती हूँ। वो देखते क्यों नहीं ? क्या आप परमात्मा को खरीद सकते हैं ? क्या आप किसी गुरु को खरीद सकते हैं? अगर कोई गुरु हो तो क्या वो अपने को बेचेगा।

उसकी अपनी एक शान होती है। उसको आप खरीद नहीं सकते। कोई भी चाहे। एक ही चीज से आप उसको मात कर सकते हैं। आपके 'प्यार' से, आपकी 'श्रद्धा' से, आपके 'प्रेम' से 'भक्ति' से। और किसी चीज से वो वश में आने वाली चीज नहीं है। उसकी अपनी एक 'शान' होती है। वो अपनी एक 'प्रतिष्ठा' में रहता है। उसकी एक 'बादशाहत' होती है। उसको क्या परवाह होगी ? आप हैं रईस, तो बैठें अपने घर में। उसको क्या ? वो पत्तल में भी खा सकता है, वो चाहे जमीन पर भी सो सकता है, वो चाहे राजमहल में भी रह सकता है। वो जैसा रहना चाहे, रहे। उसे आप से कोई मतलब नहीं। उसको तो सिर्फ़ आपके 'प्यार' से, आपकी 'श्रद्धा' से और आपकी 'खोज' से। अगर आपको खोज है तो सर आँखों पर आपको उठा लेगा। 'ऐसे गुरु को खोजना चाहिये, जो आपको परमात्मा की बात बताए, जो आपकी आत्मा की पहचान कराए। 'जो मालिक से मिलाए' वही गुरु माना हुआ है।

जिसे दिखे, उसी को गुरु ! ये तो अगुरु भी नहीं है—राक्षस हैं, 'राक्षस' ! अंगूठियाँ निकालकर आप को देते हैं। जो आदमी आपको अंगूठी निकाल कर देता है, वो क्या परमात्मा की बात करता होगा ? आपका चित्त अंगूठी में डालता है, आपको दिखाई नहीं देता ? एक है—वो अधनङ्गा नाचना सिखा रहे हैं—अधर्म सिखा रहे हैं। कौन-से धर्म में लिखा है इस तरह की चीज़ ? दूसरे आजकल के गुरुओं के बारे में यह भी जानना चाहिये कि अपने ही ढंग से कोई चीज़ निकाल ली है। इनका पहले के गुरुओं के साथ कोई नहीं मेल बैठता। 'वो' जैसे रहते थे, जैसी उनकी सिखावन थी, जैसा उनका बर्ताव था, जो उनकी बातें थीं, उनके इनका कोई मेल नहीं बैठता।

अपने धर्म के जो अनेक इतिहास चले आ रहे हैं, जिसको कि आप कह सकते हैं कि किसी भी धर्म में लिखित, वही चीज, वही चीज कही जाती है। अपने शङ्कराचार्य को पढ़ें तो आप सहजयोग समझ लेंगे; आप कबीर को पढ़ें, आप सहजयोग समझ लेंगे; नानक को पढ़ें, आप समझ लेंगे; मोहम्मद को पढ़ें आप समझ लेंगे; Christ को पढ़ें तो समझ लेंगे; कन्फ्यूशियस और सुकरात से लेकर सबको देखें तो सहजयोग ही सिखाते हैं। और ये जो सब आपको सर के बल उड़ना और फ़लाना और ढिकाना और दुनिया भर की चीज़ आपको नचा-नचाकर मारते हैं—इनको कैसे आप गुरु मान लेते हैं ? "एक ही गुरु की पहचान है—जो मालिक को मिलाए, वही गुरु है और बाक़ी गुरु नहीं।"

सत्य पर अगर आप खड़े हुए हैं, तो आपको इसी चीज को देखना। लेकिन इन्सान इतना Superficial (उथला) हो गया है कि वो 'सर्कस' को देखता है। कितने ताम-झाम लेकर के आदमी घूम रहा है। कितनी हँडियाँ सर पर रखकर चल रहा है। बाल कैसे बनाकर चल रहा है। क्या सींग लगा कर चल रहा है। "गुरु की सिर्फ़ एक ही पहचान है, कि वो सिवाय मालिक के और कोई बात नहीं जानता। उसी में रमा रहता है। वही गुरु, माने आप से ऊँचा इन्सान है।"

लेकिन जिनको आप खरीदते हैं, बाज़ार में, जिनको आप पैसा देते हैं, जो आपको बेवक़ूफ़

बनाते हैं; जो आपको Hypnotise (सम्मोहित) करते हैं, उनके साथ आप लगे हुए हैं, तो इस तरह के लोगों को क्या कहा जाए ? और इस कलियुग में, इस घोर कलियुग में, तो ऐसे अनेक अजीब तरह के एक-एक नमूने हैं। मैं आपको बताऊँ, किसका वर्णन करूँ, किसका कहूँ। ऐसे कभी न गुरु हुए, न होंगे, मेरे खयाल से जिस तरह से हो रहे हैं आजकल।

पर वो ऐसी चिपकन होती है उस चीज़ की कि अभी एक देहरादून से एक देवी जी आई थीं। उन की कुण्डलिनी एकदम ऐसे जमी हुई थी। तो मैंने कहा कि 'तुम कौन गुरु के पास गई ? उन्होंने बड़े इससे बताया कि उनके पास गई ! मैंने कहा कि 'आपने उसके बारे में पेपर में पढ़ा कि नहीं पढ़ा ? एक अठारह साल की लड़की के साथ उन्होंने जो कुछ भी गड़बड़ किया था, उस लड़की ने और पच्चीस और लड़कियों ने Blitz (ब्लिट्ज़—एक पत्रिका) में और इसमें और उसमें सब कुछ छापा था—दस साल पहले छापा था।' कहने लगीं, 'हम ने पढ़ा, पर वह सब झूठ है। 'हमने कहा', झूठ है ! तो, आपको क्या मिला उनसे ?' तो उनको बड़ा बुरा लग गया। कहने लगीं, 'मै तो शादीशुदा औरत हूँ, मैं ऐसो, मैं वैसी हूँ।' फिर मैंने कहा 'ऐसे आदमी के दरवाज़े जाना ही क्यों ?' लेकिन यह नहीं कि वो औरत बदमाश है, ये नहीं कि वो खराब औरत है। पर उस पर Hypnosis (सम्मोहन) है, hypnotised(सम्मोहित)। कोई उनको Freedom (स्वतन्त्रता) नहीं। गुरु बैठेंगे सात मञ्जिल पर जाकर ! आप जाइये, वहाँ पर 'सेवा' करिये ! इतनी बड़ी-बड़ी पेटियाँ रखी रहेंगी उसमें आप पैसा डालिये। सेवा का मतलब है—पैसा डालिये ! और लोग घर से पैसे भर-भरकर ले जाते हैं, वहाँ डालने के लिये। यह आप देख लीजिये, कहीं भी जाकर के इतनी बड़ी-बड़ी ट्रंकें रखी रहेंगी। अरे ! हमारे भी पैर छूते हैं तो कोई एक रुपया दे जाता है, कभी पाँच रुपया रख जाता है ! मुझे आती है हँसी ! मतलब आदत पड़ गई है न। हनुमान जी के मन्दिर जाओ, वहाँ भी सवा रुपया चढ़ाओ। और इसी चक्कर की वजह से हर जगह गड़बड़, हर जगह गड़बड़ हो गई है। ऐसी कोई जगह नहीं छोड़ी जो पवित्र जगह रह गई हो।

और इसी चक्कर की वजह से हमारे जो जवान बेटे हैं, जो जवान लोग हैं, सोचते है कि परमात्मा है कि तमाशा है ये सब ? क्योंकि वो तो अपनी बुद्धि रखते हैं न, अभी साबुत हैं दिमाग़ उनके। उनको अविश्वास हो रहा है। सारे धर्मों में ये हो गया है, आपको आश्चर्य होगा।

Algeria (अल्जीरिया) से हमारे पास आए थे एक साहब–जवान हैं, बहुत होशियार और इञ्जीनियर थे। वो भी इसी आन्दोलन में कि ये किस क़दर ये मुसलमान और ये Fanaticism (धर्मान्धता) इन में है और इस तरह से ये लोग दुष्टता करते हैं और ये मुल्ला लोग हैं, सब पैसा खाते हैं और सब (जनता) के पैसे पर जीते हैं और अपने को बड़ा महान् समझते हैं और सब लोग उनके सामने झुकते हैं। फिर उन्होंने Pope (पोप) को भी देखा। वो भी एक नमूना है। तो बिल्कुल अविश्वास से भरकर आए। उन्होंने कहा कि ये सब धोखा है। इसमें कोई अर्थ नहीं - सब झूठ है। वो हमारे पास आए तो हमने कहा—यह बात नहीं।

"जब सत्य है तभी उसका झूठ निकलता है।" जब सत्य होता है तो उसी के आधार पर लोग झूठ बनाते हैं न। सत्य भी कोई चीज है। Absolute (परम) भी कोई चीज़ है। 'अच्छा' हमने कहा, 'तुम देखना सहजयोग में'।

"सहजयोग जो है, ये धर्मान्धता और अविश्वास के बीचोंबीच है, जहाँ परमात्मा साक्षात् आपसे मिलते हैं। आप स्वयं इसका साक्षात्कार करें, इस का अनुभव करें, इसमें जमें। जब तक आप सहज योग में जमते नहीं, तब तक आप पूरी तरह से इसका अनुभव नहीं कर सकते। जो जम गए, उन्होंने

पा लिया, मिल जाता है। 'जिन खोजा तिन पाया।' पर खोजा ही नहीं तो कोई आपके पैर पर तो सत्य बैठने नहीं वाला कि 'भई मुझे खोज'। उसकी अपनी प्रतिष्ठा है। खोजना चाहिए, लेकिन उसको खोजने से सत्य से आनन्द उत्पन्न होता है। सत्य और आनन्द दोनों एक ही चीज़ हैं, एक ही चीज़ हैं दोनों। जैसे चन्द्र की चन्द्रिका होती है या जिस तरह से सूर्य का उसका अपना प्रकाश होता है, उसी प्रकार सत्य और आनन्द दोनों चीज़ें एक साथ हैं। जब आप सत्य को पा लेते हैं, तो आनन्द-विभोर हो जाते हैं, आनन्द में रमआण हो जाते हैं।

लेकिन ये सिर्फ़ लैक्चरबाज़ी नहीं है कि आपको मैं लैक्चर देती रहूँ सुबह से शाम तक। लैक्चर से तो मेरा गला थक गया। अब पाने की बात है कि कुछ पाओ, 'आत्मा' को पाओ। बहुत-से लोग ऐसे भी देखे हैं 'हमें तो कुछ हुआ नहीं माताजी' माने बड़े अच्छे हो गए! 'होना चाहिए'।

अगर नहीं हुआ तो कुछ गड़बड़ है आपके अन्दर। कोई न कोई तकलीफ़ है, आप बीमार हैं, आप mentally (मानसिक रूप से) ठीक नहीं हैं, आप ने कोई गलत गुरु के सामने अपना मत्था टेका है। अगर आपने अपना मत्था ही जो कि परमात्मा ने इतनी शान से बनाया है, इसको किसी गलत आदमी के सामने टेक दिया है तो खत्म हो गया मामला। आपको हमें भी अन्धता से नहीं विश्वास करना चाहिये। गलत बात है।

हम चाहते हैं आप पाओ और उसके बाद भी अगर आपने अविश्वास किया तो आपसे बड़ा मूर्ख कोई नहीं। और उसके बाद भी अगर आप जमे नहीं, तो आपके लिये क्या कहा जाए?

जब आप पा लेते हैं तो इसमें जमिये। और जमने के बाद आप देखिये कि आपकी पूरी शक्तियाँ जो भी हैं, उस तरह से हाथ से बहती हैं और आप फिर दूसरों को भी इस आनन्द को दे सकते हैं। दूसरों को भी ये सुख दे सकते हैं। और ये किस तरह से घटित होता है? कैसे बन पड़ता है? ये आप धीरे-धीरे, जैसे-जैसे इसमें गुज़रते जाते हैं आप खुद इसको समझते हैं।

अब इनमें से बहुत-से लोग हैं, छः महीने पहले हमारे पास में आए। 'सिर्फ़ छः महीने पहले' हमारे पास में आए। अब ये डॉ. बरजोर्जी साहब हैं। ये हमारे पास छः महीने पहले आए और ये बहुत बड़े डॉक्टर हैं लन्दन के, इसके अलावा जर्मनी में भी Practice(व्यवसाय)करते हैं। जब से इन्होंने पाया है, इसके पीछे पड़ गए हैं। तब से कैंसर ठीक किये हैं, दुनिया भर की बीमारियाँ ठीक की हैं और अब कहते हैं कि इसको पाने के बाद सब कुछ irrelevent(असङ्गत) लगता है। क्योंकि 'जब आप बिल्कुल सूत्र पर ही काम करने लग गए, जब आपने सूत्र को ही पकड़ लिया, तो बाक़ी चीज़ें हिलाना कुछ मुश्किल नहीं।

इस प्रकार 'आप सब' इसके अधिकारी हैं, इसीलिये इसे सह-ज (सहज) कहते हैं। 'सह' माने आपके साथ, 'ज' माने पैदा हुआ। आप भी इसके अधिकारी हैं—हर एक आदमी इसका अधिकारी है और इसको पा लेना चाहिये। जैसे एक दीप दूसरे दीप को जला सकता है, उसी प्रकार एक Realized Soul (साक्षात्कार प्राप्त) दूसरे को Realization (साक्षात्कार) दे सकता है। लेकिन Realised soul होना चाहिए। अगर एक दीप जला हुआ ही न हो, तो दूसरे को क्या करेगा? जब दूसरा दीप जल जाता है तो वो तीसरे को जला सकता है। इसी प्रकार ये घटना घटित होती है, और आदमी के अन्दर लाइट(प्रकाश)आ जाती है।

अब लाइट आने का मतलब यह नहीं कि आप Light देखते हैं। यह भी एक दूसरी एक अजीब-सी चीज़ है कि लोग लाइट देखना चाहते हैं। 'देखना जब होता है, तब वहाँ आप नहीं होते।

जैसे कि समझ लीजिये कि आप जब बाहर हैं, तो आप इस Building (भवन) को देख सकते हैं, लेकिन जब आप अन्दर आ गए, तो क्या देखियेगा? कुछ भी नहीं ! तब तो सिर्फ़ आप 'होते' मात्र हैं, आप देखते नहीं हैं। जहाँ-जहाँ देखना होता है तो सोचना कि आप अभी बाहर हैं। लाइट जो लोगों को दिखाई देती है, वो Short circuit (फ़्यूज़ उड़ना) हो जाता है न, वैसी लाइट है, जिसे स्पार्क (चिङ्गारी) बोलते हैं ! इसलिये जिस जिस को लाइट दीख रही हो, वो मुझे बताएँ—आज्ञाचक्र टूटा है उस आदमी का। उसको ठीक करना पड़ेगा।

ये सारे चक्र भी कुण्डलिनी अपने से ठीक करती चलती है। "वो आपकी माँ है", आप हरएक की अलग-अलग माँ हैं, वो आप जिसको सुरति कहते हैं, वही यह सुरति है। और यह अपने आप से चढ़ती है और अपने आप आपको ठीक करके वहाँ पहुँचा देती है। आप में अगर कोई दोष है, वो भी हम समझ सकते हैं। वह भी वो बता देती है कि क्या दोष ठीक करना है। कोई ग़लती हो गई तो भी ठीक हो सकता है, लेकिन अपने को Receptive mood (प्राप्ति इच्छुक स्थिति) में रहना चाहिये— कि 'हम इसे ले लें, प्राप्त कर लें और 'हो' जाएँ।

अब कल भी एक बात जो उठी थी, वह आज भी दिमाग़ में किसी के उठ रही है कि कुण्डलिनी Awakening (जागृति) तो, लोग कहते हैं, कि बड़ी मुश्किल चीज़ है, बड़ी कठिन चीज़ है, यह कैसे होती है। इसमें कोई नाचते हैं, कोई बन्दर जैसे नाचते हैं, कोई कुछ करते हैं। कुछ भी नहीं होता ! हमने हज़ारों की कुण्डलिनी जागृत की हुई हैं और पार किया हुआ है। ऐसा कभी भी नहीं होता है।

जो परमात्मा ने आपके उद्धार के लिये चीज़ रखी हुई है, आपके पुनर्जन्म के लिये आपकी माँ है, वह आपको कोई भी दुःख नहीं देती। उल्टे आपको वो 'अत्यन्त सुखदायी' है। कैंसर जैसी बीमारी कुण्डलिनी के awakening (जागृति) से ठीक होती है। सारी बीमारी आपकी ठीक हो सकती है। इसी तरह की बड़ी भारी 'देवदायिनी, आशीर्वाददायिनी', इस तरह की बड़ी भारी शक्ति आपके अन्दर में है। इस तरह की ग़लत धारणाएँ कर लेना, कि हम बन्दर हो जाएँगे, या मेंढक हो जाएँगे—आपको अतिमानव जो बनाने वाली चीज़ है, तो आपको क्या मेंढक बनाएगी ? इस चीज़ को आप समझ लें।

अब 'यह कठिन होता है' ! तो, उसके लिये कठिन है जो बेवकूफ़ है, जिसको मालूम नहीं, जो इसका अधिकारी नहीं, उसके लिये कठिन है। "जो इसका अधिकारी है, जो इसके सारे ही काम-काज जानता है, उसके लिये यह बाएँ हाथ का खेल है। हो सकता है कि हम इसके अधिकारी हैं और हम इसके सारे काम जानते हैं, इसीलिये आसानी से हो जाता है।" बहरहाल आप अपनी आँख से भी देख सकते हैं इसका उठना। आप इसकी जागृति देख सकते हैं, इसका चढ़ना भी देख सकते है। और इस की हम लोगों ने फ़िल्म-विल्म भी बनाई है। पर जो लोग बहुत शङ्कापूर्ण होते हैं, उनके लिये सहजयोग ज़रा मुश्किल से पनपता है। इस चीज़ को पाना चाहिये और इसको लेना चाहिये।

आजकल जो ज़माना आ गया है, जिस ज़माने में हम रह रहे हैं—कलियुग में, असल में हम ये कहेंगे कि आध्यात्मिक दृष्टि से हम लोग बहुत ही ज्यादा, बहुत ही ज्यादा कमज़ोर है। Insensitive अर्थात् संवेदना हमारे अन्दर नहीं है। हम आध्यात्म की चीज को अगर समझते होते और अगर समझते कि 'आत्मा की पहचान क्या है', तो हम कभी भी ग़लत गुरुओं के पीछे नहीं भागते। लेकिन हमारे अन्दर सच को पहचानने की शक्ति, बहुत कम हो गई है, क्षीण हो गई है। हम यह नहीं पहचान सकते, कि सच्चाई क्या है ! उसकी वजह यह है कि इतने कृत्रिम हो गए हैं, इतने artificial (कृत्रिम) हो गए—आप artificial हो

जाइएगा तो आपकी सत्य को पहचानने की शक्ति कम हो जाएगी।

पर जैसे गाँव में, अभी भी मैं देखती हूँ कि गाँव में लोग एकदम पहचान लेते हैं। वो पहचान लेते हैं कि कौन असल है और कौन नक़ल है। गाँव के लोगों में नब्ज़ होती है इस चीज़ को पहचानने की। वो समझते हैं, कि ये आदमी नक़ली है और ये आदमी असली है।

पर शहर के लोग तो आप जानते हैं, कृत्रिम हो जाते हैं। Artificially रहते हैं, इसलिये सत्य की पहचान नहीं होती और इसलिये भी जितने चोर ढंग के लोग हैं, ये सब आपके शहर के पीछे लगे हैं।

ये सारे शहरों में आते हैं, गाँव में कोई नहीं काम करता। क्योंकि आपके जेब में पैसे होते हैं, आपकी जेब से उनको मतलब है। वो क्यों गाँव में जाएँगे?

सहजयोग हमारा गाँव में चलता है। असल में शहर में तो हम यों ही आते हैं लेकिन हमारा काम तो गाँव में ही होता है। गाँव के लोग सीधे-सादे, सरल, परमात्मा से सम्बन्धित लोग होते हैं, वो इसको बहुत आसानी से पा लेते हैं। उनको एक क्षण भी नहीं लगता।

लेकिन शहर के लोगों में एक तो शहर की आबोहवा की वजह से और यहाँ के तौर-तरीक़ों की वजह से आदमी इतना अपने को बदल देता है, इस क़दर अपने को धर्म से गिरा देता है— "अब ये इसमें क्या हुआ साहब, सब लोग पीते हैं Business के लिये पीना चाहिये।" मानो जैसे Business ही भगवान है। "उसको तो पीना ही चाहिये, फिर उसके अलावा Business कैसे चलेगा।"

या तो फिर ये कहो कि तुम परमात्मा में या धर्म में बिल्कुल विश्वास नहीं करते और अगर ज़रा भी विश्वास करते हो, तो जो अधर्म है, इसको नहीं करना चाहिये। कोई ज़रूरत नहीं किसी को पीने की। ये भी एक ग़लतफ़हमी है कि Business के लिए करना पड़ता है, इसके लिये। जो आदमी अपने को धोखा देना चाहता है उसे तो कोई नहीं बचा सकता।

हमारे पति भी आप जानते हैं सरकारी नौकरी में रहे हैं उन्होंने बहुत बड़ी Shipping (जहाजी) कम्पनी चलाई, उसके बाद आज भी बहुत बड़ी जगह पर पहुँचे हुए हैं। मैंने उनसे एक बात कही कि शराब मेरे बस की नहीं और ज़िन्दगी भर उन्हों ने छुई नहीं, एक बूंद भी और भगवान की कृपा से बहुत successful (सफल) हैं। सब उनको मानते हैं, सब उनकी इज्ज़त करते हैं। आज तक किसी शराबी आदमी का कहीं पुतला बना है कि ये महान् शराबी थे। मुझे एक भी बताएँ, एक भी देश। इंगलैण्ड में लोग इतनी शराब पीते हैं, मैंने किसी को देखा नहीं कि 'ये बड़ा शराबी खड़ा हुआ है, इसकी पूजा हो रही है। कि शराब पीता था।' किसी शराबी की आज तक संसार में कहीं भी मान्यता हुई है? फिर आपका Business इससे कैसे बढ़ सकता है। अगर आपकी इज्ज़त ही नहीं रहेगी तो आपका Business कैसे? इज्ज़त से Business होता है। धोखाधड़ी से Business नहीं है। जो आदमी एक बार खड़ा हो जाए तो कहते हैं 'एक आदमी खड़ा हुआ है 'ये'।

इस तरह से अपने को आप इन चक्करों में, इन societies में, इसमें इस तरह से क्यों मिलाते चले जाते हैं। आप अपने व्यक्तित्व को सँभालें; इसी के अन्दर परमात्मा का वास है। आजकल के ज़माने में ये बातें करना ही बेवक़ूफ़ी है और कहना ही बेवक़ूफ़ी है। लेकिन आप नहीं जानते कि आपने

अपने को कितना तोड़ डाला है, अपने को कितना गुलाम कर लिया है।

इन सब चीजों में अपने को बहा देने के बाद आपको मैं क्या दे सकती हूँ? आप ही बताइये। अब कम से कम सबको ये व्रत लेना चाहिए कि हम खुद जो हैं, हमारी इज्जत है। परमात्मा ने हमको एक amoeba से इन्सान बनाया है। एक amoeba छोटा-सा, उससे इन्सान बनाना कितनी कठिन चीज है। हजारों चीजों में से गुजार करके इतनी योनियों में से गुजार के आज आपकी जैसी एक सुन्दर चीज परमात्मा ने बनाकर रखी है। फिर आपको उसने freedom देदी, स्वतन्त्रता दे दी कि तुम चाहो तो अच्छाई को वरण करो और चाहो तो बुराई को। जिस चीज को चाहो तुम अपना सकते हो। तुम्हें बुराई को अपनाना है चलो बुराई करो, अच्छाई को अपनाना है अच्छाई करो।

अब, आपको भी सोचना चाहिये कि जिस परमात्मा ने हमें बनाया है, 'इतनी' मेहनत से बनाया है, उसने वो भी इन्तज़ाम हमारे अन्दर ज़रूर कर दिये होंगे जिससे हम उसको जानें और उसको समझें और अपने को जानें और हमारा मतलब क्या है, हम क्यों संसार में आए हैं, हमारा क्या fulfilment है? मनुष्य ने यह कभी जानने की कोशिश नहीं की कि आखिर हम इस संसार में क्यों आए हैं? Scientist यह क्यों नहीं सोचते कि हम amoeba से इन्सान क्यों बनाए गए? हमारी कौन-सी ऐसी बात है कि जिसके लिए परमात्मा ने इतनी मेहनत की और उसके बाद हमें स्वतन्त्रता दे दी?

बस इस जगह परमात्मा भी आपके आगे झुक जाते हैं क्योंकि आप स्वतन्त्र हैं। आपकी स्वतन्त्रता परमात्मा नहीं छीन सकते। अगर आपको परमात्मा के साम्राज्य में बिठाना है, आपको अगर राजा बनाना है, तो आपको परतन्त्र करके कैसे बनाया जाए? आपको क्या hypnosis करके बनाया जाएगा? आप पूरी तरह से स्वतन्त्र हैं। आप चाहें तो परमात्मा को स्वीकार करें, अपने जीवन में, और चाहें तो शैतान को। दोनों रास्ते आपके लिए पूरी तरह परमात्मा ने खोज रखे हैं।

और सबसे बड़ी मेहनत की है। मैं आपसे बताती हूं कि गुरुओं ने कितनी आफ़तें उठाई हैं। इतनी ही मेहनत, आपके पीछे सारे जितने भी अवतार हो गए, उन्होंने, गुरुओं ने, कितनी मेहनत करी है। इनको कितना सताया, हमने उनको कितना छला। उनकी कितनी तकलीफ़, वो सारी बर्दाश्त करके उन्होंने आपको बिठाने की कोशिश की।

लेकिन कलियुग कुछ ऐसा आया, बवण्डर जैसा कि हम सब कुछ भूल गए और हमारी जो भी आत्मिक संवेदन है इसको भूल गए। हम पहचान ही नहीं पाते किसी इन्सान की शक्ल देखकर कि ये असली है कि नक़ली है—आश्चर्य है। शक्ल से जाहिर हो जाता है अगर कोई आदमी वाक़ई परमात्मा का आदमी है। उसकी शक्ल से ज़ाहिर होता है। हम यह पहचानना ही भूल गए कि यह हमारे अन्दर की जो sensitivity है, जो हमारे अन्दर की संवेदनशीलता है वो पूरी तरह से ख़त्म हो गई। जब श्री रामचन्द्रजी संसार में आये थे सब लोग जानते थे कि ये एक अवतार हैं। श्रीकृष्ण जी जब आये थे तब सब लोग जानते थे कि ये अवतार हैं। लेकिन आज ये ज़माना आ गया कि कोई किसी को पहचानता नहीं। ईसा मसीह के समय में भी ऐसा ही हुआ। लेकिन उस समय कुछ लोगों ने तो उनको पहचाना। लेकिन आज ये समय आ गया कि सब भूतों और राक्षसों को लोग अवतार मानते हैं।

इस चक्कर से अपने को हटा लेना चाहिये और एक ही चीज माँगनी चाहिए कि प्रभु तुम हमारे अन्दर जागो जिससे हम अपने को पहचानें। आत्मा को पहचाने बग़ैर हम परमात्मा

का नहीं जान सकते, नहीं जान सकते, नहीं जान सकते। बाक़ी सब बेकार है। ये सब circus है। ये सिर्फ़, जिसको कहते हैं बाहरी तमाशे हैं। इस बाहरी तमाशे से अपने को सन्तुष्ट रखने से कोई फ़ायदा नहीं। आप अपने को ही धोखा दे रहे हैं। परमात्मा को कौन धोखा दे सकता है। वो तो आप को खूब अच्छे से जानता है। आप अपना ही नुक़सान कर रहे हैं। आपको पाना चाहिये, क्योंकि आपकी अपनी शक्ति है, आपकी अपनी सम्पदा है, आपके अन्दर सारा स्रोत है। आपके अन्दर भरा सब कुछ है। इसे आपको लेना चाहिए और फिर इसमें जमना चाहिए।

सहजयोग में जब मैं आती हूँ तो लोग बहुत आते हैं, मैं जानती हूँ। लेकिन यहाँ पर सबका कहना है कि माँ आगे लोग नहीं जाते। अब यहाँ पर हमने ऐसे लोग देखे हैं कि जिनसे हमें कोई उम्मीद नहीं थी, वो कहाँ के कहाँ पहुँच गए। और जो कि बहुत हम सोचते थे, तो वहीं के वहीं जमे बैठे हैं। फिर लेकर आ गए वही सिरदर्द, वही आफ़तें, वही परेशानियाँ। वही ये हो रहा है, वही वो हो रहा है, अभी भी उनका level उतना ही ऊँचा उठा है।

"सहजयोग में जब तक आप लोगों को देंगे नहीं तब तक आपकी प्रगति नहीं होगी। देना पड़ेगा, जैसे-जैसे आप देते रहेंगे, वैसे-वैसे आप आगे बढ़ेंगे"। कोई अगर हम लोग बड़ी भारी Boat तैयार करते हैं, Ship तैयार करते हैं, अगर हम उसको पानी में नहीं छोड़ें तो उसका क्या अर्थ निकलता है? उसी प्रकार है, अगर मनुष्य परमात्मा को पाकर के और घर में बैठ जाए, तो ऐसे दीप से फ़ायदा क्या कि जो जलाकर के आप table के नीचे रख दीजिये। दीप इसलिए जलाया जाता है कि दूसरों को प्रकाश दे।

उससे आप अपने अन्दर अपने को भी देख सकते हैं और दूसरों को भी देख सकते हैं। आप अपने भी चक्र देख सकते हैं और दूसरों के भी देख सकते हैं। आप अपने भी आनन्द को देख सकते हैं और दूसरों की व्यथा को भी देख सकते हैं। और आप ये समझते हैं कि दूसरों को किस तरह से देना चाहिये। किस जगह ये चीज़ रोक रही है उसको। किस तरह से इसको हमें बनाना चाहिये।

आज के लिये इतना काफ़ी है। हम लोग अब ज़रा ध्यान करें, देखें कितने लोग पार होते हैं।

"आलस्य सहजयोग का सबसे बड़ा दुश्मन है।"

—श्री माताजी

●

आरती के पश्चात् हर सहजयोगी को ३ बार श्री माताजी के स्वास्थ्य हेतु निम्न प्रार्थना करनी चाहिए। क्योंकि परमपूज्य श्री माताजी की अपनी कोई इच्छा नहीं, वह तो हम सभी सहजयोगियों की इच्छा पर निर्भर करती हैं।

"श्री माताजी हम सम्पूर्ण विश्व के सहजयोगी आपके स्वास्थ्य की कामना करते हैं।"

मिथ्या

(कवर २ का शेषांश)

इन सभी से छुटकारा पाना है ऐसा जब सोचोगे और यत्न शुरू करते ही मिथ्या ज्ञान प्राप्त होता है। फिर पिंगला नाड़ी पर से चित्त फिसल कर सिद्धि वगैरा प्रलोभनों में मनुष्य फँसता है। कुण्डलिनी का दर्शन तथा चक्रदर्शन आदि सारा मिथ्या ही है क्योंकि उससे कोई लाभ नहीं होता, उल्टा नुकसान होता है। जो-जो नियम व संयम आचरण में लाना जरूरी है इसकी जिद पकड़ते हैं वह सभी चित्त को बन्धनकारक होता है और मुक्ति का मार्ग ही नहीं मिलता। परन्तु सभी मिथ्या आत्म-साक्षात्कार से नहीं जाते। किन्तु धीरे-धीरे ये भी छूट सकते हैं। अगर पूर्ण सङ्कल्प से मिथ्या को हृदय से निकाला जाये तो आत्मा के शुद्धस्वरूप का दर्शन होता है और फिर वही शुद्ध स्वरूप आत्मसात होता है।

और तब मानवचित्त अनन्त, अनादि सत्यप्रेममय शिवस्वरूप में मग्न हो जाता है। इसी सत्य की पहचान उस चित्त में होती है। और केवल यही जानने के लिए यह मानवचित्त है। उस आत्मा में इस चित्त को उतरना चाहिए। जो चित्त मिथ्या का त्याग करते-करते अग्रसर होगा और जो 'सब कुछ है, पर नहीं है' का मिथ्या बन्धन तोड़ेगा वही चित्त आत्मस्वरूप होगा। आत्मा कभी भी खराब नहीं होती और न ही नष्ट होती। केवल मानव चित्त ही अपनी इच्छा के पीछे भागकर अपना मार्ग छोड़ देता है। यह माया है, इसे जान-बूझकर बनाया है। इसके बगैर चित्त की तैयारी नहीं होती। इसीलिए इस माया से डरने के बजाय उसे पहचानिए। तब वही आपका मार्ग प्रकाशित करेगी। जैसे सूर्य को बादल ढक देते हैं और उसके दर्शन भी करा सकते हैं। माया मिथ्या है यह जानते ही वह अलग हट जाती है और सूर्य का दर्शन होता है। सूर्य तो सदासर्वदा है ही परन्तु बादल का काम क्या होता है ? बादलों की वजह से ही मन में सूर्य-दर्शन की तीव्र इच्छा पैदा होती है। फिर सूर्य क्षणभर के लिए चमकता है और छिप जाता है। इस कारण आँखों को सूर्य देखने की ताक़त और हिम्मत आती है।

कितनी मेहनत से मनुष्य को बनाया है केवल एक क़दम अपने दम पे लेगा तो काम बन जाएगा। परन्तु अभी तक तो वैसा कुछ नहीं बन रहा है। इसीलिए आपकी माँ बनकर आयी हूँ। आप के जो प्रश्न हैं वे लिखकर भेजिए। ध्यान में बैठिए। आपस में भी सहजयोग पर बातें करें तो बहुत अच्छा है। चित्त हमेशा अपने अन्तरीय उड्डान पर रखिये। बाहर का जितना हो सके उतना भूल जाइए। उसकी सारी व्यवस्था होती है ये विश्वास रखिये। उसके कितने ही प्रमाण हैं। उसके बाद कुछ भी करते समय चित्त आत्मस्वरूप रहता है। संसार असंसार ये भेद नहीं रहता क्योंकि भेद दिखानेवाला विकृत अँधेरा खत्म होकर ज्ञान के प्रकाश में सारा ही शुभ घटित होता है। फिर कृष्ण द्वारा संहार हो या क्राइस्ट का वधस्तम्भ।

ये सब बताकर समझ में आने वाला नहीं, मार्ग दिखाकर नहीं होगा, उसको चलकर काटना होगा, तभी सब कुछ समझ में आएगा।

आपकी चिट्ठियाँ आती हैं तब मैं अगला कार्य-क्रम निश्चित करती हूँ। कुछ दिनों बाद उसकी भी जरूरत नहीं पड़ेगी। परन्तु अभी तो सब कोई चिट्ठी लिखिए और उसमें अपनी प्रगति लिखिए। फिर आने के बाद देखते हैं विराट की कितनी नाड़ियाँ जागृत हुई हैं। इस कार्य की बढ़ोत्तरी भारत-भूमि के पवित्र आञ्चल में होगी यही दीख रहा है।

आगे यह कार्य जोर पकड़ने पर सारे देश-विदेशों में इसका प्रसार होगा।

लन्दन में आज ५ मई को सहस्रार दिन मनाया। तब मैंने गिने-चुने २०, २५ लोगों को बुलाकर सब रूपरेखा बनायी।

सबको अनेकानेक आशीर्वाद और अनन्त प्रेम।

सदैव आपकी माँ,
निर्मला

Edited & Published by Sh. S. C. Rai, 43, Bunglow Road, Delhi-110007 and
Printed at Ratnadeep Press, Darya Ganj, New Delhi-110002.
[One Issue Rs. 5.00, Annual Subscription Rs. 20.00 Foreign [By Airmail £ 4 $ 8]